बसंत बहार

बसंत बहार

पुष्पेन्दु जैन

श्री जैन धर्म प्रवर्द्धनी सभा
लखनऊ

प्रकाशकीय

स्व० कविवर पुष्पेन्दु के निकट सम्पर्क मे आने वाला प्रत्येक व्यक्ति अनुभव करता था कि उनमे उच्चकोटि की नैसर्गिक काव्य प्रतिभा है। उन्होने अधिकाश काव्य-रचना स्वात सुखाय की थी, अतः वे मित्रों और परिचितो तथा कवि गोष्ठियो और कवि सम्मेलनो मे अपनी रचनाओ को सुना कर ही सतोष प्राप्त कर लेते थे, उन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित कराने का कोई उद्योग नहीं किया। उनके दिवगत होने पर लखनऊ जैन समाज ने अनुभव किया कि उनके काव्य साहित्य को विलुप्त नहीं होने देना चाहिए, बल्कि उसे हिन्दी ससार के समक्ष प्रकाशित करना उसका पावन कर्त्तव्य है। प्रस्तुत सकलन मे उनकी १०८ प्रतिनिधि कविताए सग्रहीत है। सुयोग मिलने पर उनकी अन्य रचनाओ का भी प्रकाशन किया जायगा। इस पुस्तक के प्रकाशन मे सर्वश्री भाई गगाराम जैन, ज्ञानचन्द सौभाग्यमल, वीरेन्द्रकुमार जैन इत्रवाले, मोहनलाल प्रतिभा प्रेस वाले, सुमेरचन्द वीरचन्द्र चिकनवाले तथा कुन्दनलाल गगवाल ने क्रमश ११००), १००१), ५०१), २००), १०१) तथा १०१) की आर्थिक सहायता का वचन देकर हमारा उत्साह बढाया है।

कवि पुष्पेन्दु के बिखरे कागजो से उनकी कविताओ का सकलन करके पाडुलिपि तैयार करने मे श्री महावीरप्रसाद जैन तथा पाडुलिपि के दुहराने मे 'नवजीवन' सम्पादकीय विभाग के श्री श्यामाचरण तिवारी ने जो अथक परिश्रम किया है, वह कवि के प्रति उनके प्रेम का परिचायक है।

कवि का चित्र उपलब्ध करने के लिए हम श्री विश्वनाथ कुलश्रेष्ठ के आभारी है।

बसत-पचमी
६-२-६५

युगल किशोर जैन, सभापति,
श्री जैन धर्म प्रवर्द्धनी सभा, लखनऊ

भूमिका

पुष्पेन्दु हिन्दी साहित्य की उन प्रतिभाओ मे है जिन्हें मान्यता नहीं मिली – जो आज की दुनिया के प्रचार से परे, निष्काम भाव से साहित्य की साधना करते रहे। सघर्षों ने उन्हे जैसे तोड दिया, बहुत कम अवस्था मे उनकी मृत्यु हो गई ।

पुष्पेन्दु की यह कविताए उनके जीवनकाल मे पुस्तक रूप में नही आ पाई – यह पुष्पेन्दु का दुर्भाग्य था। पुष्पेन्दु मे सहृदय कवि था, पुष्पेन्दु मे एक सात्विकता से भरी आस्था थी, और उनकी कविताओ के इस सग्रह का हिन्दी ससार मे स्वागत होगा –– मुझे इस बात की पूरी आशा है ।

'बसत-बहार' इस सग्रह की पहली कविता है, जिस पर इस सग्रह का नाम पड़ा है। कितनी आस्था है, कितना विश्वास है जीवन के हर कदम पर सघर्ष करने वाले उस प्राणी मे जब वह कहता है––

"मेरे जीवन का पतझड भी,
आज बसत बहार बन गया!"

मध्यवर्ग, विशेषत निम्न मध्य वर्ग मे जन्म लेकर पुष्पेन्दु ने क्या-क्या नही सहा, क्या-क्या नही झेला। मध्य वर्ग के इस कवि ने मध्य वर्ग का कितना सजीव और वास्तविक चित्र खीचा है अपनी 'ये मध्य वर्ग के मानव है' कविता मे––

"मैं देख रहा तुम भी देखो !

मैं देख रहा उन लोगो को, जो मानव का आकार लिए,
होठों से हसी बिखेर रहे, अन्तर मे हाहाकार लिए,
ये मध्य वर्ग के मानव हैं, इस ओर नहीं उस ओर नहीं,
जिस ओर दृष्टि फैलाते है, पाते हैं पथ का छोर नहीं !"

पुष्पेन्दु मे कल्पना के स्वप्न हैं, पुष्पेन्दु में यथार्थ की पीडा है, सवेदना और सहानुभूति का यह कवि बडे धैर्य के साथ जीवन के सघर्षों मे रत रहा—वह टूट गया पर झुका नही। जिन्दगी भर दुख झेलनेवाला यह कवि किस धैर्य और साहस के साथ कहता है—

"दुख एक कसौटी है जिस पर
यह मानव परखा जाता है,
दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यो घबडाता है !"

पुष्पेन्दु के मित्रो के प्रयत्न से उस प्रतिभावान कवि की कविताओ का यह सग्रह प्रकाश मे आ रहा है—उनके मित्रो को बधाई और उस कवि के प्रति मेरी श्रद्धांजलि ।

चित्रलेखा,
महानगर, लखनऊ
बसत-पचमी, १९६५

भगवतीचरण वर्मा

एक कसक भरी पावन स्मृति

साल डेढ साल बीत गया, फिर भी यह विश्वास नहीं होता कि पुष्पेन्दु मर चुके हैं। उदासी और आत्मानन्द मिश्रित उनका सहज मुस्कान भरा सौम्य मुखमण्डल ऐसी वस्तु नहीं, जिसे कि मै कभी भुला सकू। वे मेरे रोज के मिलने वाले साथियो मे न थे। फिर भी यह नही कह सकता कि उनसे मेरा घनिष्ठ नाता नहीं था। वे मेरे बाल्यबधु श्री ज्ञानचद जैन के घनिष्ठ साथी थे। उन्हीं के बहाने से मेरा उनका नेह-नाता भी आज से लगभग ३०-३२ वर्ष पूर्व बध गया था। ज्ञानचद जी से उनके कई नाते थे। एक के अनुसार वे उनके ससुर थे, दूसरे के अनुसार उनके दामाद भी। और शतरज की गुरु-शिष्य परम्परा मे वे ज्ञानचद जी के पौत्र की पीढ़ी मे थे। बराबर की उम्र और बराबर के साथ मे ये तीनो नाते मिल-जुलकर दोनो के नेह-नाते पर ऐसा रोचक रग चढा चुके थे कि मैं भी उस रग से अछूता न बच सका। वैसे मेरे और उनके बीच मुख्यतया काव्य-श्रोता और कवि का ही नाता विशेष रहा। जब-तब ज्ञानचद जी के साथ ही वे मेरे यहा आ जाते और मेरे आग्रह पर घटो अपनी कविताए सुनाया करते थे। बडे हाजिर जवाब, खुश-मिजाज, खुश-एखलाक और शिष्ट पुरुष थे। मैने उन्हे लाल लगोट बाधे हुए कसरत-कुश्ती के बाद अपनी परचून की दूकान पर आकर ग्राहको को नमक-मिर्च की पुडिया बाध कर देते हुए भी देखा और कवि सम्मेलनो मे अपने सुमधुर कठ तथा सुन्दर कविताओ से जन-समूह का मन बाधते हुए भी— दोनो ही रूपो मे सहज, अलिप्त और आत्मलीन।

पुष्पेन्दु जगल के गुलाब थे, जिन्हें न तो कभी किसी ने खाद-पानी दिया, न कलम किया, न किसी ऊचे साहित्यिक समाज में उनका कभी चर्चा हुआ। फिर भी उनका नैसर्गिक सौन्दर्य और उनकी अन्तर्मन की महक ऐसी थी कि वे दूसरो का ध्यान सहज ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। उन्हें कभी विधिवत अध्ययन करने का अवसर न मिला। उनके पिता लाला बनारसीदास जी मध्यवित्त के व्यक्ति थे–स्वभाव में सवा सोलह आने लखनवी। बहुत ही अच्छे किस्सागो और लतीफे-बाज। बच्चे कई थे – शायद सात। लेकिन किसी को भी भलीभाति पढा-लिखा न सके। स्व० फूलचन्द जैन 'पुष्पेन्दु' अपने माता-पिता की चौथी सतान थे। आरम्भ मे स्कूल मे भरती हुए, मगर शायद तीसरे या चौथे दर्जे से अधिक उनकी पढाई न चल सकी। घर मे तगी थी–१०-११ वर्ष की अवस्था मे टिकुली-बिंदी, मिस्सी की पेटी लिये हुए गली-गली फेरी लगाने लगे। कुछ दिनों बाद एक अग्रेजी दवाखाने मे नौकरी कर ली। यह नौकरी शायद ३–४ वर्षों तक चली। फिर उन्होने परचून की एक छोटी-सी दूकान खोल ली। एक परिचित दूकानदार के यहा से २५-३० रु का माल उधार ले आये और दवाओ की पुडिया बाधने के बाद नमक-मिर्च-हल्दी, आटा-दाल-चावल की पुडिया बाधने का अभ्यास आरम्भ किया। दुक्खम-सुक्खम गाडी चल पडी। जहा तक मेरी जानकारी है, उनकी काव्य-प्रतिभा ने भी लगभग इसी समय अपना विकास आरम्भ किया था। उस समय कवि सम्मेलनो मे समस्या पूर्तियो की धूम थी। वे भी स्वाभाविक रूप से उधर ही बढ़े। कवि के तखल्लुस के तौर पर उन्होने अपने फूलचन्द नाम का साहित्यिक अनुवाद कर डाला– पुष्पेन्दु। आगे चलकर इसी नाम से वे अधिक प्रसिद्ध हुए।

लगभग इसी समय उनका पहला विवाह हुआ और उनके हसी-खुशी भरे हल्के-फुल्के जीवन मे दुख और अवसाद का भी पदार्पण हुआ। पहली पत्नी अधिक दिन जी न पाई। डील-डौल मे तगडी और कद मे

भी इनसे दो-एक अगुल निकलती हुई थी। यार लोग इनका मजाक उड़ाया करते थे, क्योंकि पुष्पेन्दु अपने कसरत-कुश्ती के शौक के बावजूद सदा सींकिया पहलवान बने रहे। बहरहाल, पहले विवाह का सुख अधिक दिन न भोग पाये। विवाह के ८-९ महीने के भीतर ही इनकी पत्नी अपने मायके में ही मर गई। दो-तीन बरस बाद इनका दूसरा विवाह हुआ। दूसरी पत्नी स्थूलकाय, पर स्वभाव की अच्छी थी। बेचारी किसी बीमारी के कारण सतान सुख न दे सकी। सतान की लालसा से इलाज कराया। किसी गलत दवा के असर से उनका दिमाग बिगड गया। मस्तिष्क असतुलित हो जाने की दशा मे पुष्पेन्दु ने लगभग १३--१४ वर्षों तक जिस प्रेम और लगन के साथ अपनी दूसरी पत्नी की सेवा की, वह प्राय बहुत ही कम पुरुष कर पाते है। पत्नी जो भी इच्छा करतीं, उसे भरसक पूरा करने का प्रयास करते थे। कभी कुछ खाने की इच्छा करती तो पुष्पेन्दु तुरत वह वस्तु ला देते या स्वय बना कर खिलाते। कभी-कभी रात मे १०-११ बजे कहती, मुझे घुमाने ले चलो, पुष्पेन्दु सोत्साह तैयार हो जाते। उन्होने उनका हर तरह से मन रखने की कोशिश की। मानवीय प्रेम, सेवाभाव और अलौकिक करुणा से ओत-प्रोत ऐसे उदाहरण कम से कम मेरे देखने मे तो बहुत कम आये है।

इसी काल मे पुष्पेन्दु की काव्य प्रतिभा का पूर्ण विकास भी हुआ। आस्था, लगन, धैर्य और करुणा की यह दिव्य पूजी कविताओ के रूप मे पुष्पेन्दु का यशो-वैभव बन गई। प्रस्तुत काव्य-सग्रह मे उनकी उन दिनो की अनेक कविताए सकलित है। उनकी उस जमाने की लिखी हुई 'दुख-सुख' कविता मुझे आज तक बेहद पसन्द है। मैने न जाने कितनी बार उनसे आग्रह करके वह कविता सुनी थी–

दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यो घबडाता है।

० ०

चला हूं पतझार सा धरा पर,
मुझे बहारो से क्या प्रयोजन,
मिली है काटो की सेज मुझको,
सुमन के हारो से क्या प्रयोजन।

o o

मुझको मेरा पतझड प्रिय है,
मधुमास मुबारक हो तुमको।

o o

न अब मुस्कराने को जी चाहता है,
न आसू बहाने को जी चाहता है।

o o

नैनो से बाहर मत निकलो
मेरे आंसू, मेरे आसू !

इस तरह की एक नही अनेक कविताए ऐसी है, जिन्हें देखते ही मेरे सामने कवि का वह कठोर तपस्या काल सामने आ जाता है और क्षुद्र भावुक न होने पर भी दिवगत दिव्यात्मा के लिए मेरी आखों से विवश आसू निकल आते हैं।

पुष्पेन्दु का स्वर बड़ा ही मीठा और करुण था। सुनने वालो को वह अपनी ओर बिना किसी प्रयास के ही आकर्षित कर लेता था। उनकी काव्य-पक्तियों मे बनावट का तो नाम ही न होता था। ठेठ दिल से निकली थी और दिल ही को छूती थीं।

पुष्पेन्दु की कविताओ मे उनके अतृप्त अफलित प्रेम की एक रोमानी झलक भी जगह-जगह मिलती है। ज्ञानचद कभी-कभी उन्हें छेडने के लिए मेरे सामने चुटकियां लेते तो पुष्पेन्दु दयनीय मुस्कान के साथ मुझसे कहते-- "पण्डित जी आप इसकी बातो का विश्वास तो नही कर रहे हैं न ?" "नहीं, नहीं, फुल्लन। मुझे तुम्हारे प्रति अटूट विश्वास और अनन्य श्रद्धा है," मै कहता। फुल्लन उर्फ पुष्पेन्दु बच्चे के समान सतुष्ट होकर ज्ञानचद को विजय-गर्व भरी दृष्टि से देखने लगते। उनकी वह दृष्टि आज मेरे कलेजे मे स्मृति की पैनी बर्छी बनकर चुभ रही है। हम तीनों के ही एक और मित्र-- मेरे सहपाठी गुलाबचन्द जैन कभी-कभी ऐसी रस-गोष्ठियो मे साथ देते तो दो मित्रो का सहारा पाकर पुष्पेन्दु ज्ञानचद के ऊपर मीठे विनोद-प्रहार करने के लिए हुलस-हुलस पडा करते थे।

प० शुकदेव बिहारी जी मिश्र, पण्डित रूपनारायण जी पाण्डेय, पण्डित श्रीनारायण चतुर्वेदी, भगवतीचरण जी वर्मा, श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान, कन्हैयालाल जी मिश्र प्रभाकर जैसे स्वनामधन्य व्यक्तियो ने पुष्पेन्दु की रचनाओ को समय-समय पर सराहा था। "माधुरी" मे स्व पाडेय जी ने उनकी कई कविताए प्रकाशित भी की थी। लेकिन प्रकाश मे आने के लिए पुष्पेन्दु कभी विशेष उतावले नही रहे। उनका स्वभाव बडा सकोची था।

लगभग ३५-३६ वर्ष की अवस्था मे उनकी दूसरी पत्नी भी उन्हे वियोगी बनाकर परलोक सिधार गई। उसके तीन-चार साल बाद स्वजनो के आग्रह पर उन्होने तीसरा विवाह किया। इस जीवन-सगिनी को पाकर वे परम सतुष्ट हुए। उनके जीवन मे पहली बार नव बसत आया। वे अपने आपको बहुत ही सुखी अनभव करने लगे। बस, केवल एक ही चिता उन्हे सालती थी। वे चार कन्याओ के पिता बन गये थे। पहली बार कवि को अर्थ चिताओ ने घेरा। मित्रो के आग्रह से और स्वय अपनी भी इच्छा से प्रेरित होकर उन्होने प्राइवेट तौर पर हाई स्कूल पास किया,

इटर पास किया और बी ए पास करने की लालसा भी वे रखते थे। पर यह सभव न हो सका। इन परीक्षाओ मे उत्तीर्ण होने के बाद उनके जीवन में एक नया मोड आया। परचून की दूकान छोडकर वे कुछ दिनो के लिए अध्यापक बने, फिर दैनिक 'नवजीवन' के सम्पादकीय विभाग मे आ गये। कुल जमा ८—९ वर्षों के अन्दर ही उन्होने यह सब कुछ पाया और फिर सहसा पेट की कठिन बीमारी से ग्रस्त होकर वे चल बसे । मैं उन्हें अस्पताल देखने गया था। उनके मुरझाये चेहरे पर तब भी मुस्कान खिल रही थी। हममे से किसी ने यह न सोचा था कि पुष्पेन्दु अब जल्दी ही हमारे बीच से सदा के लिए उठ जायेंगे। कवि का अन्तिम सुख उनकी सुखदात्री धर्मपत्नी का शाश्वत दुख बनकर रह गया । विधि की यह विडम्बना मेरे मन को रह-रह कर सालती है।

देहधारी व्यक्ति चला गया, लेकिन उसका काव्य-व्यक्तित्व आज भी हमारे साथ है। मेरा विश्वास है कि यह कविताए मेरे मित्र की याद बहुत दिन बहुतो के दिलो मे बनाये रखने मे समर्थ सिद्ध होगी।

चौक, लखनऊ
२६-१-६५

अमृतलाल नागर

•

बसंत बहार

मेरे जीवन का पतझड़ भी
आज बसंत बहार बन गया

आज निठुर व्यवहार किसी का,
मुझको छू कर प्यार बन गया।

मै यौवन का मादक मधुवन
देख रहा था आंख पसारे,
मन की केवल एक लहर पर
मैंने चूम लिए अंगारे,

आत्मसमर्पण करके लेने
पीड़ा का उपचार चला मैं,
अपने मन की आतुरता से
जीती बाजी हार गया मै,

आकुल अंतर की पीड़ा से
गीतो का संसार बन गया।

अपने उर मे आग लगा कर
मैंने दीपक राग सुनाया,
किन्तु किसी का हृदय कभी
मेरी पीडा पहचान न पाया,

जग ने हसते से प्रभात को
देखा रोती रात न देखी,
इन व्याकुल नैनो के पीछे
छिपी हुई बरसात न देखी,

रजनी की भीगी पलको से
ऊषा का उपहार बन गया ।

मन की मधुर कल्पनाओ से
पीडा का चिर परिचित नाता,
मन मे चाह मयक मिलन की
पर चकोर अगार चबाता,

फूलों के प्रेमी मधुकर ने
काटो की परवाह नहीं की,
दीप शिखा पर प्राण दे दिए
किन्तु शलभ ने आह नहीं की,

पीडा का आलिगन ही अब
पीडा का उपचार बन गया ।

नैन नीर के चिर सचय से
मैने एक सिधु लहराया,
आहों ने बडवानल बन कर
मेरी लहरो को तडपाया,

सागर की हर लहर किसी
तट के चुम्बन की प्यास लिए है,
सागर की हर लहर गगन मे
उडने का विश्वास लिए है,
लहरो का सताप गगन मे
मेघो का अभिसार बन गया ।

घन घूघट मे झांक-झांक कर
लाज भरी चितवन छिप जाती,
किसी निठुर की विरह वेदना
व्याकुल होकर नीर बहाती,
मुस्कानो के मधुमय क्षण मे
जग का अधर-अधर मुस्काये,
किन्तु आसुओ की बेला मे
कोई मेरे पास न आये,
आज अनल सगीत हृदय का
व्याकुल मेघ मल्हार बन गया।

मेरे जीवन का पतझड भी,
आज बसत बहार बन गया ।

मधुऋतु मुसकाना क्यों छोड़े

पतझार तुम्हारे भय से यह मधुऋतु मुस्काना क्यो छोडे,
इठलाती कोयल और चहकती बुलबुल गाना क्यो छोडे ।

सरिता की तरल तरगो मे कितने मधुगान मचलते है,
चुलबुली हवा के झोंको मे कितने अरमान मचलते है,
उल्लसित प्रकृति के अगो मे जब नयी जवानी आती है,
नभ की रगीन भुजाओ मे अनजान धरा बध जाती है,

प्यासा जीवन उल्लासो के त्योहार मनाना क्यो छोडे,
पतझार तुम्हारे भय से यह मधुऋतु मुस्काना क्यों छोडे ।

हर दिन नूतन उल्लास लिए प्राची पर ऊषा मुस्काती
हर दिन निराश होकर निशीथ के अधकार मे खो जाती,

हर दिन तारक मणि से रजनी अपना श्रृंगार सजाती है
हर दिन रवि किरण करों द्वारा नभ पथ पर लुटी जाती है,
पर भावी शंका से कोई श्रृंगार सजाना क्यों छोड़े,
इठलाती कोयल और चहकती बुलबुल गाना क्यों छोड़े ।

फूल से हम मुस्कराना सीख लें

धूल से पैदा हुए है धूल मे मिल जायेंगे,
किन्तु जितने दिन जियेंगे फूल सा मुस्कायेंगे ।

पा रहा है फूल क्यो सम्मान इस ससार मे,
झूलता है फूल ही क्यो डालियो के प्यार मे,
स्वागतो मे हार बन कर फूल क्यो बढ़ता रहा,
देवता के शीश पर भी फूल क्यो चढता रहा ।

क्योंकि वह हस कर हृदय अपना छिपाना जानता है,
शूल मे भी फूल प्रतिक्षण मुस्कराना जानता है,
स्वय सौरभ का नहीं वह आप कुछ उपभोग करता,
किन्तु वह ससार मे सौरभ लुटाना जानता है ।

इसलिए पाता रहा सम्मान वह संसार में,
इसलिए ही झूमता है डालियों के प्यार में,
स्वागतों में हार बन कर इसलिए बढ़ता रहा,
देवता के शीश पर भी इसलिए चढ़ता रहा।

फूल से हम अपने सौरभ को लुटाना सीख लें,
फूल से हम संकटों में मुस्कराना सीख लें।

एक साथी चाहिए

एक साथी चाहिए
जिस पर कि पीडाए हृदय की व्यक्त करके
वेदना का भार हल्का कर सकू।
प्यार की राहें बहुत देखी पडी हैं,
हैं पडी देखीं निगाहें प्यार की कितनी यहा,
दर्द दिल का बाटने वाले बहुत मिलते यहां हैं,
किन्तु मन का मीत मिल पाता कहा ?
एक साथी चाहिए जिसमे कि
भावुकता हृदय की ढाल करके
भावना का ज्वार हल्का कर सकू।

मै सरल किसको समझ लू,
सब गरल से हैं भरे ये चमचमाते स्वर्ण के घट,
आज स्वागत के लिए उन्मुक्त होकर
विश्व भर की वेदना ने खोल रखे द्वार के पट,

एक साथी चाहिए विषपान के पश्चात भी
जिसकी मधुर मुस्कान से
गरल का अधिकार हल्का कर सकू ।

स्वप्न के पर बाधकर मै उड चला
रगीन नभ की कल्पना का क्षितिज छूने,
यह विहसता चांद, हसते फूल, गाते मधुप,
मेरी कल्पनाओ के नमूने,
एक साथी चाहिए जिसमे कि मैं प्रतिबिम्ब अपनी
कल्पना का देखकर
प्रणय पारावार हल्का कर सकू ।

बज रही कब से न जाने
स्वास तारो पर मधुरतम प्राण की यह रागिनी है,
सज रही मधु मिलन का सुख लूटने को
इन रुपहली रश्मियो से यामिनी है;
एक अन्तर्वेदना की आग लेकर
चल रहा नभ की डगर मे यह दिवाकर,
चाव का यह काफिला भी चल रहा
चुपचाप रातो रात कब से व्योम पथ पर।
एक साथी चाहिए जिससे कि मैं भी
मिलन को सभव समझकर
पथ का विस्तार हल्का कर सकू ।
वेदना का भार हल्का कर सकू ।

आज मेरा प्यार मुझ से दूर है

लक्ष्य धुधला हो क्षितिज पर छिप रहा
और अब आराधना मे बल नहीं,
आज घेरे है परिस्थितिया मुझे
साधना को साध्य का सबल नहीं,
प्राण को जिससे मिले कुछ प्रेरणा
वह मेरा आधार मुझसे दूर है,
आज मेरा प्यार मुझसे दूर है।

आज जीवन डाल पर बैठी हुई
क्यो न मन की मौन कोयल बोलती,
क्यो न जीवन के क्षणो मे वह पिकी
आज गीतो का मधुर रस घोलती,
जो मधुर मधुमास लाता है सदा
वह मेरा आधार मुझसे दूर है,
आज मेरा प्यार मुझसे दूर है।

मै अपरिचित राहगीरो से यहा
आज परिचय का सहारा मागता,
मै भवर मे डुबकिया लेता हुआ
आज लहरो से किनारा मागता,
जो लगाती पार यह जीवन तरी
वह मेरी पतवार मुझसे दूर है,
आज मेरा प्यार मुझसे दूर है।

मै पथिक हू एक, पथ भूला हुआ
पर प्रगति मेरी न रुक सकती कभी,
जिन्दगी जो मौत को ललकारती
मौत के सम्मुख न झुक सकती कभी।
मै अमर पीयूष पीकर चल रहा
मृत्यु का व्यापार मुझसे दूर है,
आज मेरा प्यार मुझसे दूर है।

नैन सम्पुट मे समेटे जागरण
नीड पर निद्रा छिडकती रात है,
इस निशा के आवरण से झाकता,
प्राण प्राची पर सुनहला प्रात है,
कौन कहता है अमर आलोकमय
वह मेरा ससार मुझसे दूर है।
आज मेरा प्यार मुझसे दूर है।

पलक पांवडे मैं बिछाता रहूँगा

पलक पावडे पथ पर मैं किसी के बिछाता रहा हू, बिछाता रहूगा,
समय पथ पर स्वास के दो चरण मै बढाता रहा हू, बढाता रहूगा।

ये माना कि प्रतिबिब पाषाण का है
मुझे किन्तु उससे नहीं कुछ प्रयोजन,
मेरी शक्ति के स्रोत को, साधना को
इसी से मिला आज तक वह समर्थन,

कि जिसकी प्रबल प्रेरणा से सदा मुस्कराता रहा, मुस्कराता रहूगा,
पलक पावडे पथ पर मै किसी के बिछाता रहा हू, बिछाता रहूगा।।

किसी लालिमा से बिदा हो दिवाकर
गगन के समुन्नत शिखर पर सुहाया,
किसी लालिमा का अतिथि बन दिवाकर
मरण के तिमिर गर्त मे जा समाया,

मृतक को समुत्थान सजीवनी से जिलाता रहा हू, जिलाता रहूगा,
पलक पांवड़े पथ पर मै किसी के बिछाता रहा हू, बिछाता रहूगा।

मिले मुझको अभिशाप झेला उन्हें भी
नहीं किन्तु वरदान की भीख मागी,
मिले मुझको अपमान झेला उन्हे भी
नहीं किन्तु सम्मान की भीख मांगी;

घृणित दैन्य से आत्म गौरव मनुज का बचाता रहा हू, बचाता रहूगा,
समय पथ पर स्वास के दो चरण मैं बढ़ाता रहा हू, बढाता रहूगा।

झुलसती धरा की उसांसें गगन मे
सजल श्याम घन की घटा हेरती हैं,
तृषित चातको की निगाहें घनो मे
सजल स्वाति की बूद को टेरती हैं,

घनो मे सजो स्वाति के कण तृषायें मिटाता रहा हू, मिटाता रहूगा,
समय पथ पर स्वास के दो चरण मै बढाता रहा हू, बढ़ाता रहूगा।

तुम क्या समझो कैसे मन को बहलाना पड़ता है

तुम क्या समझो कैसे मन को बहलाना पडता है,
आकुल अन्तर की पीडा को सहलाना पडता है।

उन दूर चमकती हुई तारिकाओ से
मेरा अन्तर प्राय पूछा करता है,
ओ अन्तरिक्ष की आभाओं बतला दो
मेरे सपने साकार कभी क्या होगे,
तब एक सितारा जलकर बुझकर कहता

प्रिय पथ पर प्राणो को केवल मिट जाना पडता है,
तुम क्या समझो कैसे मन को बहलाना पडता है।

रगीन कल्पना इन्द्रधनुष सी नभ पर
बनती है पर बन-बनकर मिट जाती है,

आकुल अभिलाषा अपनी ही सीमा में
उठती है उठकर किन्तु सिमट जाती है,
अन्तर मे आंसू का संसार सजोए

इन गीले नयनो को बरबस मुस्काना पड़ता है,
तुम क्या समझो कैसे मन को बहलाना पडता है,
आकुल अन्तर की पीड़ा को सहलाना पडता है।

ये मध्यवर्ग के मानव हैं

मै देख रहा तुम भी देखो ।

मैं देख रहा उन लोगो को, जो मानव का आकार लिए,
होठो से हसी बिखेर रहे, अन्तर मे हाहाकार लिए,
ये मध्य वर्ग के मानव हैं, इस ओर नहीं उस ओर नहीं,
जिस ओर दृष्टि फैलाते हैं, पाते है पथ का छोर नहीं ।

इनके अन्तर मे चिन्ता के काले घन छाये रहते है,
ऊपर से जैसे तैसे ये मन को बहलाये रहते हैं,
इनके हसने मे हास्य नहीं रोते हैं तो केवल मन मे,
बाहर वाले कब जान सके क्या बीत रही है जीवन मे ।

मैं उनकी बात नहीं करता जिनके भोजन-भडार भरे,
मैं उनकी बात नहीं करता, जिनके धन के आगार भरे,
उन लक्षाधीशो को छोडो, पलते जो मृदुल दुलारो पर,
उन सत्ताधीशों को छोडो जो पलते हैं अधिकारो पर।

साधारण जीवन के गृहस्थ जिनको मर्यादा है प्यारी,
जिनके कधो पर मानव की निर्भर है नैतिकता सारी,
रातो करवटें बदलते हैं, दिन दौड़धूप मे खोते हैं,
जाने किस सुख की आशा मे जीवन का बोझा ढोते हैं ?

इनके अन्दर हैं विद्यमान चलनी जैसी काली रातें
इनके नैनो मे छिपी हुई करुणा की भीगी बरसातें,
इनको वह प्राप्त सुयोग नहीं गृह त्याग बने वनवासी जो,
बीबी बच्चो की चिन्ता तज बन जायें साधु-सन्यासी जो।

सामाजिक रहन-सहन की ये सीमाए तोड नहीं सकते,
अपने उत्तरदायित्वो से अपना मुख मोड नहीं सकते,
यह सुख अपनाते है वह भी सताप इन्हें बन जाता है,
ये पुण्य कार्य भी करते है तो पाप इन्हें बन जाता है।

वरदान इन्हें मिलते है पर बनकर अभिशाप सताते है,
इनके खेतो पर जलधर भी पत्थर ही बरसा जाते हैं।
पीडाओ का परिवार लिए, सघर्षों का ससार लिए,
होंठो से हसी बिखेर रहे, अन्तर मे हाहाकार लिये।

ये मध्यवर्ग के मानव है,
मै देख रहा तुम भी देखो।

दुख भी मानव की सम्पति है !

दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यो घबडाता है ।

सुख आया है तो जायेगा,
दुख आया है तो जायेगा,
सुख जायेगा तो दुख देकर,
दुख जायेगा तो सुख देकर ।

सुख देकर जाने वाले से
रे मानव क्यों भय खाता है,
दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यो घबडाता है ।

सुख मे है व्यसन प्रमाद भरे,
दुख मे पुरुषार्थ चमकता है,
दुख की ज्वाला मे पड़ कर ही
कुन्दन सा तेज दमकता है ।

दुख का अभ्यासी मानव ही
सुख पर अधिकार जमाता है,
दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यों घबड़ाता है।

सुख सध्या का वह लाल क्षितिज
जिसके पश्चात अंधेरा है,
दुख प्रात' का झुटपुटा समय
जिसके पश्चात सबेरा है।

सुख मे सब भूले रहते हैं,
दुख सबकी याद दिलाता है,
दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यो घबड़ाता है।

दुख के सम्मुख जो सिहर उठे,
उनको इतिहास न जान सका,
दुख मे जो कर्मठ धीर रहे,
उनको ही जग पहिचान सका।

दुख एक कसौटी है जिस पर
यह मानव परखा जाता है,
दुख भी मानव की सम्पति है,
तू दुख से क्यो घबड़ाता है।

पुण्य कार्य मत करो भले ही

तुम पुण्य कार्य मत करो भले ही
किन्तु करो मत पाप,
पुण्य के फल को पा लोगे,
मत रटो ईश का नाम भले ही
किन्तु करो सत् कार्य,
ईश के बल को पा लोगे।

देख किसी के दुख को
मन मे हुई न सह-अनुभूति
दया, क्षमा, सहयोग, सरलता
बनी न आत्म-विभूति,
तो यह व्रत, उपवास
न हर सकते मन का संताप,
हार्दिकता से रहित व्यर्थ हैं
सारे क्रिया-कलाप।

तुम करो न तीर्थ-स्नान भले
पर करो सत्य व्यवहार,
तीर्थ के फल को पा लोगे,
मत रटो ईश का नाम भले ही
किन्तु करो सत् कार्य,
ईश के बल को पा लोगे ।

तुमने देखा धनी लोग
करते हैं कितना दान,
इस प्रकार वे करते होंगे
संचित पुण्य महान,
उनकी होड लगाने से तुम
अपने मुख को मोडो,
तुम देवत्व प्राप्ति के भ्रम मे
मानवता मत छोडो ।

तुम करो न चाहे दान भले ही
पर न लुटेरे बनो,
दान के फल को पा लोगे,
मत रटो ईश का नाम भले ही
किन्तु करो सत् कार्य
ईश के बल को पा लोगे ।

दुर्बल सबल धनी निर्धन
सब मानव एक समान,
जीवन की उन्नति करना
है सबका ध्येय महान,

प्रगति पथ पर बढ़ने का
सबको समान अधिकार,
अखिल विश्व मानव-समाज
है मानव का परिवार ।

तुम प्यार न भी कर सको भले ही
किन्तु करो मत घृणा,
प्यार के फल को पा लोगे,
मत रटो ईश का नाम भले ही
किन्तु करो सत् कार्य,
ईश के बल को पा लोगे ।

मानवता का मान चाहिए

मैं मानव हू मुझको केवल मानवता का मान चाहिए।

विश्व किसी विश्वास-बिन्दु पर अपने श्रद्धा-सुमन चढ़ाये,
मुझे विरोध नहीं इस जग से वह पूजे जिसको जो भाये,
किन्तु उसी के चरणो पर नत हो सकता है मेरा अन्तर,
जो मानव बनकर मानव का पथ प्रकाशित करे निरन्तर,

जिसमे मानवता प्रतिबिम्बित हो ऐसा भगवान चाहिए,
मै मानव हू मुझको केवल मानवता का मान चाहिए।

देख रहा मैं जीर्ण-शीर्ण सी परम्पराओ की रेखाए,
घुटते जीवन पर कल्पित आदर्शों की निर्जीव शिलाए,
ध्वस्त प्रथाओं का नवयुग में कोई अर्थ नहीं हो सकता,
आज पनपते विश्वासो के साथ अनर्थ नहीं हो सकता;

आज सिसकती मानवता को जीवन का वरदान चाहिए,
मै मानव हू मुझको केवल मानवता का मान चाहिए।

सच कहता हू मुझको ऐसे अमर लोक की चाह नहीं है,
अहा कि पीडित प्राणो के प्रति कोई अन्तर्दाह नहीं है
स्वर्गवाद या नर्कवाद से मुझको कोई द्रोह नहीं है,
किन्तु अप्रस्तुत में ही केन्द्रित उल्लासो का मोह नहीं है;
नित नूतन आलोक भरा वसुधा का स्वर्ण-विहान चाहिए,
मै मानव हू मुझको केवल मानवता का मान चाहिए।

पूछ रहा युग आज कि क्या मानव के लिए विधान बना है,
या विधान की वेदी पर मर मिटने को इसान बना है,
जो समीप हो जीवन के वह सशोधन स्वीकार मुझे है,
स्वर्ग-मोक्ष से पहले जीवित मानवता से प्यार मुझे है
दास नहीं मै परम्परा का मुझको नव-निर्माण चाहिए,
मै मानव हू मुझको केवल मानवता का मान चाहिए ॥

आखिर इसका कारण क्या है ?

जितना जग मे पैदा होता
वह काफी से भी ज्यादा है,
फिर भी मानव भूखा मरता
आखिर इसका कारण क्या है ?

ऊचे-ऊचे शैल देश मे प्रतिपल जीवन बहा रहे हैं,
वसुधरा पर खेत अनेको हरे भरे लहलहा रहे हैं,
धन-धान्यादिक से परिपूरित है यह अपनी धरती माता,
फिर दाने-दाने पर मानव क्यों मानव पर छुरी चलाता ?

बडे-बडे गोदामों मे
लाखो मन भोजन भरा पडा है,
फिर भी मानव भूखा मरता
आखिर इसका कारण क्या है ?

बडी-बडी मीले निशि-दिन कपडे तैयार किया करती हैं,
बडी-बडी शिक्षाशालाए ज्ञान-प्रसार किया करती हैं,

होते हैं दिन-रात देश में जन-शिक्षा के ही आयोजन,
फिर भी बढते ही आते हैं मानव पर मानव के बंधन;

आज राष्ट्र की संचालक जब
निज की ही शासन सत्ता है,
फिर भी मानव भूखा मरता
आखिर इसका कारण क्या है ?

एक ओर ऊचे महलो मे मधुमय वैभव खेल रहा है,
एक ओर टूटी झोपडियो मे मानव दुख झेल रहा है,
देवालय की दीवारों पर स्वर्णयुक्त यह मीनाकारी,
कहीं तडपती मैदानो मे गृह-विहीन जनता बेचारी,

कुछ मानव की स्वार्थ पिपासा
कुछ मानव की कायरता है,
जितना जग मे पैदा होता,
वह काफी से भी ज्यादा है ।

कितना वैभव आज विश्व का सिधु गर्भ में समा चुका है,
कितना निर्लज हो कर मानव रक्त सिधु मे नहा चुका है,
आज पिशाचो से भी मानव ! पैशाचिकता बढ़ी तुम्हारी,
धूर्त तीसरे महायुद्ध की आज कर रहे फिर तैयारी,

अरे किसलिए ओ मानव तू
मानव को ठुकराता है,
जितना जग मे पैदा होता
वह काफी से भी ज्यादा है ।

मैं भी वही धूल हूँ

जो चरण पर पडी मैं वही धूल हू ।

लहलहाते हुए खेत औ, क्यारिया
मुस्कराती हुई मजु फुलवारिया,
झोपडी ये, महल ये, नगर-ग्राम ये
सृष्टि विध्वस मेरे ही हैं नाम ये,

रूप की रश्मिया मैं खिलाती रही
विश्व मे स्वाग नूतन रचाती रही,
वेदना और उल्लास का मूल हू
जो चरण पर पडी मे वही धूल हू ।

दामिनी बन घनो मे दमकती हू मैं
चांद बन कर घनों मे चमकती हू मैं,
गीत जिनके अनेको हैं गाये गये
जो कि वैभव के झूले झुलाये गये,

सूरमा जिनको मस्तक झुकाये गये
गोद मे वे भी मेरे सुलाये गये,
मैं पतन और उत्थान का मूल हू
जो चरण पर पडी मैं वही धूल हू ।

ग्रीष्म की मुझपे छायी बलायें रहीं
मुझपे सावन की छायी घटायें रहीं,
नीर का अब मुझे कुछ सहारा मिला
विश्व उपवन का फूलों से आगन खिला,

वृक्ष की डालियो पर झुलाई गयी
वायु की थपकियो मे सुलायी गयी,
धूल थी किन्तु अब बन गयी फूल हू
जो चरण पर पडी मैं वही धूल हू ।

मै प्रगति पर बढ़ी तो यहा तक बढ़ी
पांव की धूल थी शीश पर जा चढी,
एक दिन यो ही अभिमान मे आ गयी
मैं बवडर बनी व्योम पर छा गयी,

लोग फिर मुझसे आखें चुराने लगे
लोग फिर मुझसे दामन बचाने लगे,
धूल थी किन्तु अब बन गयी शूल हू
जो चरण पर पडी मै वही धूल हू ।

घास

कब जनम लीन हम धरती पर
यू तो कछु नाहिं बिचारा है,
मुलु दुनिया के सब बिरवन ते
इतिहास हमार पियारा है।

जाने कितने कबि कबिता मां
लिखि-लिखि धरिगे पोथी पुरान,
मुलु भूलेहु भटकेहु तौ कौनौ
हमरी कइती कब दिहिसि ध्यान।

केतने फल फूल और बिरवा
बइठे कबिता के आसन पर,
मुलु हमरी ओर नहीं देखिसि
कबहू कौनहु कबि या सायर।

आंखिन मां आंसू भरिकै हम
धरती के पाव पखारा है,
तुम सच मानो सब बिरवन ते
इतिहास हमार पियारा है ।

नगरन मा, बाग बगइचा मां
हमका तुम पइहो ठांव-ठांव,
खेतन मां औ खरिहानन मां
हमका तुम पइहो गाव-गांव ।

जब कौनो भारी बगिया मा,
या राजमहल मा जाइत हन,
तो हर दुसरे अउथे हमहू
आपन सिंगार सजाइत हन ।

हम हर मौसम मा मुस्काई
हम पतझड़ का दुरियाय विहेन,
अधर आवा, तूफान चला
हम सबका धता बताय विहेन ।

बिरवा हुइ गये धराशायी
मुलु हम कब पांव पसारा है,
तुम सच मानो सब बिरवन ते
इतिहास हमार पियारा है ।

मनई तो आपनि अक्किल से
आपनि भोजन उपजाय लेत,
औ बाघ भेड़ियहु चीर फाड़कर
आपनि क्षुधा मिटाय लेत ।

मुलु जौन बिचारे गाय-बैल
नित आपनि देह खपाय रहे,
दिन-रात कठिन मेहनत कइकै
धरती के प्रान जियाय रहें।

हम तनके मा हरियाइत हन
हम तिनके प्रान बचाइत हन,
तिनके अहार बनिके आपनि
हम जीवन सफल बनाइत हन ।

आपनि परिवार जियाय रहा
हमरे बल ते घसियारा है,
तुम सच मानो सब बिरवन ते
इतिहास हमार पियारा है ।

हमरे घर बारह मास बजै
नौबति, गौनई रहै जारी,
बरखा बहिया से धरती की
हम सदा करित हन रखवारी।

जो हमका मुह मा दाब लिहिसि
हम तेहिका प्रान बचाइत हन,
हम देशभक्त नर की समाधि पर
चादर हरी चढ़ाइत हन ।

हमरी अगुरी पर तुम द्याखो
यू जौन ओस अस छावा है,
धरती मैया की देही तँ
चुचुआय पसीना आवा है ।

धरती मैया के सग हमहू
सूरज का चक्कर मारा है,
तुम सच मानो सब बिरवन ते
इतिहास हमार पियारा है ।

जब किरनन के हसा आवैं
हम मोती उन्हें चुगाइत हन,
सर पर धर नीर भरी गागर
हम सबके सगुन मनाइत हन ।

हम व्याहे मा सकल्प समय
कितनन के भाग जगाइत हन,
हम मनई के खातिर मग मा
मखमल के फरस बिछाइत हन ।

मैदानन मा हम मनई का
पथ की पहिचान कराइत हन,
हम अपन करेजवा चीरि
राह मा पगडडी बन जाइत हन ।

आचल मा मोती भरिकै हम
जग की आरती उतारा है,
तुम सच मानो सब बिरवन ते
इतिहास हमार पियारा है ।

चट्टानें और लहरें

चट्टानो की ठोकर खाकर
बोल उठी लहरो की टोली,

हमे आज किसने रोका है,
आज हमे किसने टोका है ।

सरल तरल जीवन लेकर
जग को जीवन देने निकली है,
ओ चट्टानो, भूल न जाना
हम लहरें गिरिराज-लली है ।

तुम गिरि के टूटे टुकडे हो
तुम कुलघालक हो कुल-द्रोही,
तुम पर ठोकर मारा करते हैं
सदैव अनजान बटोही ।

एक भयकर अट्टहास
कर उठीं सुदृढ़ पाषाण-शिलाए,
बोली ओ लहरो, ठहरो,
हम तुमको अपनी शक्ति बताए ।

हम हैं वह चट्टान कि जिनको
विक्रमशाली सत्ताधारी,
सौंपा करते हैं अपनी रक्षा की
भारी जिम्मेवारी ।

हम चट्टानें निर्मित करतीं
सुदृढ़ दुर्ग के परकोटो को,
हम हस-हसकर झेला करतीं,
गोलों को, भीषण चोटो को ।

सभव है मिट्टी के ढेलो को
प्रवाह मे फोड सको तुम,
किन्तु असभव है, मेरे भी
वक्षस्थल को फोड सको तुम ।

लहरें बोलीं--यह सच है तुम
नहीं अचानक हिल सकती हो,
किन्तु हमारी तरह कभी तुम
नहीं एक में मिल सकती हो ।

तुम्हें नहीं सहयोग सुहाता,
पास तुम्हारे खंडित बल है,
किन्तु हमारी बूंद-बूंद को
सुखद सम्मिलन का संबल है।

हमे अलग करने वाले
पथ के रोड़ों तुम भूल न जाना,
हमे अलग होकर आता है
अवसर पाते ही मिल जाना।

दो धारा मे बांट भले दे
पाहन पथ अवरोध तुम्हारा,
पर आगे बढ़कर मिल जाना
रहा सदैव स्वभाव हमारा।

एक ओर था चट्टानो का
दम्भभरा दल भारी भरकम,
एक ओर था सरल तरल
लहरों का बस अनवरत परिश्रम।

चट्टाने बिछ गयीं धरा पर
घिस-घिसकर बन गयीं मरुस्थल,
किन्तु विजयिनी तरल तरगें
गीत गा रहीं कल-कल, छल-छल।

अभी न नयनो से ओट होना

अभी न नयनो से ओट होना
तुम्हें नयन भर निहार तो लू,
सनेह श्रद्धा के आसुओ से
चरण-कमल को पखार तो लू ।

हृदय मे आतप को सजोकर
दृगो मे सावन बसा चुका हू,
असीम दूरी समाप्त करके
समीप कितने मै आ चुका हू ।

अतीत भूलो को गुनगुनाकर,
दुखो को किंचित दुलार तो लू,
अभी न नयनो से ओट होना,
तुम्हें नयन भर निहार तो लू ।

हृदय के व्याकुल निवेदनो ने
विनीत स्वर से तुम्हें पुकारा,
पसार कर चांदनी का आंचल,
चकोर ने चांद को निहारा ।

तनिक रुको देवता हृदय के
हृदय का आंगन बुहार तो लू,
अभी न नयनो से ओट होना
तुम्हें नयन भर निहार तो लू ।

सजा के नैवेद्य भावना का
उतार लू आरती तुम्हारी,
दया का सागर न छीन लेंगे
दया की दो बूंद के भिखारी ।

ये अर्चना-पात्र मन-सुमन से
तनिक दयामय सवार तो लू,
अभी न नयनो से ओट होना
तुम्हें नयन भर निहार तो लू ।

हजारो लाखो करोड़ो छवियां
निहारने को नयन हैं दो ही
बढ़ाके नयनो मे प्यास इतनी
बनो न इतने निठुर विमोही ।

तुम्हारी मंजुल मनोज्ञ छवि को
हृदय-पटल पर उतार तो लूं,
अभी न नयनों से ओट होना
तुम्हें नयन भर निहार तो लूं।

क्षितिज का छोर

रुक सका मै कब, क्षितिज का
छोर छूने जा रहा हू ।

इन प्रलय की आधियो से
कब रुका है पथ मेरा,
रोक कब पाया दिवाकर को
निशाओ का अधेरा,

रुक न सकता मै क्षितिज का
छोर छूने जा रहा हू ।

व्योम पर छायी हुई यह
घन-घटाए क्या करेंगी,
नील नभ की टिमटिमाती
तारिकाए क्या करेंगी,

मैं प्रलय को जीत नव-
निर्माण को अपना रहा हू ।

विश्व के प्रत्येक कण मे
व्याप्त है जीवन-कहानी,
मौत की अगड़ाइयो ने
जिन्दगी से हार मानी,

मै विजय के मच पर
सगीत अपना गा रहा हू ।

मै हलाहल पी चुका हू
काल को पहिचानता हू,
मृत्यु को मै पथ का
सकेत पत्थर मानता हू ।

साधना से सिद्धि के
साम्राज्य को अपना रहा हू,

मैं क्षितिज का छोर छूने जा रहा हू ।

महान मानव

वह महान है,
वह मानव है ।

विश्व मच पर सीना ताने
खडा हुआ है उसका उद्यम,
नव विकास की सजग मूर्ति वह
सुन्दर, सुन्दरतर, सुन्दरतम ।

वह भीषण झझावातो के
झटको को भी झेला करता,
प्राण हथेली पर रखकर वह
सदा मौत से खेला करता ।

पथ अवरोधक चट्टानो के
वह मस्तक तोडा करता है,
पूर्व और पश्चिम के
टूटे छोरों को जोडा करता है ।

वह कांटो का ताज पहन कर
दुर्गम पथ पर चलता रहता,
अग्नि परीक्षा मे कचन सा
तप कर और चमकता रहता।

उसे न पथ से डिगा सके है
वैभव के स्वर्णिम सिंहासन,
और यातनाएं न छीन पायीं
उससे उसका अपनापन ।

सिद्ध साहसी आशावादी
भावी से भयभीत नहीं है,
है वह वज्र विनिर्मित पर
उससे कोमल नवनीत नहीं है ।

उसने दुर्दमनीय परिस्थिति के
प्रत्यावर्तन देखे है,
उसने अपने जीवन मे
अगणित उत्थान पतन देखे है ।

चिर सुषुप्त पतनोन्मुख युग मे
उसने नव निर्माण भर दिया,
पाषाणो की प्रतिमा मे भी
नवजीवन नवप्राण भर दिया ।

अगणित जन मन का अधिनायक,
सबल शक्तियों का दृढ नेता,
वह मानव की स्वतन्त्रता के
महासमर का वीर विजेता ।

वह पौरुष की पावन प्रतिमा
वह विकास की अमर कहानी,
अमर प्रगति के पथ प्रवाह की
ज्वलित जीवनी सजग जवानी।

उसका ही है तेज दिवाकर
जिससे आज प्रदीप्त हो रहा,
उसकी ही निधियों को तो नभ
नीलम थाली में सजो रहा।

उसके ही यश के प्रकाश को
शशि नव किरणों से फैलाता,
है उसका मधुहास कि जो
बनकर बसंत बन-बन छा जाता।

अखिल विश्व का वह वैभव है,
वह महान है, वह मानव है।

वह पत्थर को भगवान बना सकता है

सकट को हस-हस कर अपनाने वाला
अगारों पर पग धर बढ जाने वाला,
पथ के काटो को सदा कुचलता चलता
फासी के फन्दो पर मुस्काने वाला,

अभिशापो को वरदान बना सकता है,
वह पत्थर को भगवान बना सकता है।

कब रोक सकीं उसको पथ की बाधाए
उसने विदीर्ण कर डालीं शैल-शिलाए,
उन्नत सस्कृति का उज्ज्वल गान वही है
जग मे केवल अपना उपमान वही है,

वह अवनति को उत्थान बना सकता है
वह पत्थर को भगवान बना सकता है।

पग चिन्हों पर सजतीं जगमग रेखाए
युग उदाहरण बनती जीवन घटनाए
भावी शताब्दिया उसके युग चरणो की
नत मस्तक हो करती पूजा अर्चाए,

घटना को युग का गान बना सकता है,
वह पत्थर को भगवान बना सकता है।

जड तुल्य जगत मे उसने जीवन देखा
पेडो पौधों मे मानव सा मन देखा,
कब कटी मृत्यु से उसकी जीवन रेखा
उसने मरने मे जीता जीवन देखा,

वह करुणा को कल्याण बना सकता है,
वह पत्थर को भगवान बना सकता है।

जीवन मरण की नदी एक ही है

कहा मौत ने एक दिन जिन्दगी से
कि होता है जीवन का संगीत कैसा,
कहा जिन्दगी ने तनिक मुस्करा कर
मधुर प्रीति सा स्निग्ध नवनीत जैसा।

कहा मौत ने फिर तनिक यह बताओ
कि क्यो मौत से जिन्दगी दूर रहती,
कहा जिन्दगी ने कि तुम भूलती हो
ये गंगा और यमुना सदा साथ बहती।

कि जीवन मरण की नदी एक ही है
किसी भांति इनके नहीं कूल दो है,
प्रगति के समर्थक हैं जीवन मरण ये
भले ही लगे ये कि प्रतिकूल वो हैं।

कहा मौत ने पाप से भय किसी को
किसी को हुई पुण्य की चाह क्यो है,

बनी एक है नर्क की राह यदि तो
बनी दूसरी स्वर्ग की राह क्यों है ।

कहा जिन्दगी ने कि दोनों ही राहें
परस्पर मिलन के लिए झुक गयी हैं,
उलट फेर करके ये दोनों निगाहें
यहा एक ही बिन्दु पर झुक गयी हैं ।

कि भव वाटिका मे लगा एक तरु है
उसी वृक्ष की डाल के फूल दो हैं,
कि जीवन मरण की नदी एक ही है
प्रकट में हमें दीखते कूल दो है ।

य दोनो परस्पर विरोधी लकीरें
कहा मौत ने पथ अवरोध करतीं,
कहा जिन्दगी ने नहीं बात ऐसी,
ये दोनो नये पथ का शोध करतीं ।

कहा मौत ने क्या दिवस के उजाले को
निशि का अधेरा नहीं छीन लेगा,
कहा जिन्दगी ने कि निशि का अधेरा
नयी जिन्दगी का सबेरा बनेगा ।

लहर ये उठीं एक ही सिन्धु की हैं,
किसी भाति इनके नहीं मूल दो हैं,
कि भव-वाटिका मे लगा एक तरु है
उसी वृक्ष की डाल के फूल दो हैं ।

मैं बना रहूँ जग बना रहे

मै बना रहू, जग बना रहे।
तारक मणि मडित नील गगन,
लख तारो का झिलमिल नर्तन,
मन ही मन कह उठता है मन,
मेरे ऊपर यह रत्न जडित
सुन्दर वितान सा तना रहे।
मै बना रहू जग बना रहे।

यह चन्द्र मधुर मुस्कान लिए,
उन्नति क्रम का अभिमान लिए
किरणो का कोष महान लिए,
अमृतमय वसुधा करने को
यह सदा सुधा मे सना रहे।
मै बना रहू जग बना रहे।

यह साध्य गगन सौन्दर्य प्रखर,
यह धवल हिमाचल शैल शिखर,
यह सरिताओ की लोल लहर,
इनका रहस्य कुछ जान सकू,
बस एक यही साधना रहे ।

यह मित्र भला उस पार कहा,
यह प्रेमपूर्ण परिवार कहा,
यह चिर परिचित ससार कहा,
केवल सब को सब पहिचानें
बस प्रेम परस्पर घना रहे ।
मै बना रहू जग बना रहे ।

जलते रहना ही जीवन है

देखो उन दीपाधारो पर
जब वे दीप जला करते है,
तब उनमे जीवन होता है,
उनमे प्राण पला करते है,

जलना ही उनका यौवन है,
जलते रहना ही जीवन है ।

चतुर चिकित्सक कभी नहीं
नाडी ठडी होने देता है ,
उसे गर्म रखकर ही तो
वह प्राणो की नैया खेता है,

जलना जीवन की धडकन है,
जलते रहना ही जीवन है ।

वह जीवन क्या जिस जीवन मे
जलन नहीं है आग नहीं है,

जिसमें स्वय प्रकाशित होने का
प्रदीप्त अनुराग नहीं है,
जलना जीवन का मधुबन है,
जलते रहना ही जीवन है ।

अतर जलता है तो उसमें
जीवन का प्रकाश निश्चय है,
यदि प्रकाश बुझने लगता है
तो समझो मरने का भय है,
जलना प्राणो का मधुबन है,
जलते रहना ही जीवन है ।

भव-भव के सताप पाप
तप के प्रताप से जल जाते हैं,
तप कर ही तो सिद्ध तपस्वी
आत्मतत्व मे ढल जाते है,
जलना अपना मौन मनन है,
जलते रहना ही जीवन है।

किन्तु किसी के जलते जीवन पर
कोई क्यो रास रचाये,
कीट पतगो के समान वह
जल कर भस्म न क्यो हो जाये,
जलना केवल अपनापन है,
जलते रहना ही जीवन है ।

सुख भी देखा दुख भी देखा

जीवन मे सुख भी देखा है,
जीवन मे दुख भी देखा है।

सुख है एक फूल उपवन का,
आज खिला जो कल मुरझाया,
दुख है जीवन का वह पतझड
जिसने जग का नेह न पाया।

सुख मरुथल की वह मरीचिका
जहा तृषा है तृप्ति नहीं है,
दुख वह बलिदानो की वेदी
जिसे मिली विज्ञप्ति नहीं है।

सुख गरमी की तपती सध्या,
दुख जाडो की लम्बी राते,
सुख मे दुख आने का भय है
दुख मे सुख लाने की घातें ।

सुख मे ईर्षा, द्वेष दम्भ की
खूब कमाई हो जाती है,
दुख मे मानव की ममता के
सग सगाई हो जाती है ।

जीवन के प्रत्येक पृष्ठ पर
सुख-दु ख का लेखा है,
जीवन मे सुख भी देखा है
जीवन मे दुख भी देखा है ।

सुख प्रभात का वह मोती है
जिसमे कोई सार नहीं है,
दुख जीवन का वह श्रमकण है
मिलता जिसे दुलार नहीं है ।

सुख जैसे सागर की ज्वाला,
दुख है तपती हुई धरा-सा,
सुख मे जीवन प्यासा-प्यासा
दुख मे विषम विषाद भरा-सा ।

सुख मे ऐसा लगा कि जैसे
जीवन जल्दी बीत रहा है,
साधो का सन्ताप समेटे
एक अधूरा गीत रहा है ।

दुख में ऐसा लगा कि जैसे
जीवन का विस्तार बहुत है,
थके हुए पैरो के आगे
लम्बे पथ का भार बहुत है ।

कभी समाप्त न होने वाले
दूर क्षितिज की सी रेखा है,
जीवन मे सुख भी देखा है,
जीवन मे दुख भी देखा है ।

दुख की फास नहीं लग पाये
यह भी यहा नहीं सभव है,
सुख की एक हिलोर न आये
यह भी यहा नहीं सभव है ।

सुख बस इतना हो जीवन मे
जिसमे जीवन डूब न जाये,
दुख भी इतना ही हो केवल
जिसमे जीवन ऊब न पाये ।

अथवा ऐसा मन हो जिसमे
दुख या सुख का भेद न हो,
सुख में कोई हर्ष नहीं हो,
दुख मे कोई खेद न हो।

जहां सदा निरपेक्ष भाव से
जीवन कर्म हुआ करता है,
अपनी-अपनी सीमाओ में
अपना धर्म हुआ करता है।

धन्य वही जिसने जीवन को
आत्म शक्ति मे अवरेखा है,
जीवन मे दुख भी देखा है,
जीवन मे सुख भी देखा है।

दुख डराना चाहता है

दुख भयंकर रूप धर
जग को डराना चाहता है,
और डरते हृदय पर
अधिकार पाना चाहता है ।

दुख वहीं जमता जहां
मानव इसे दुतकारता है,
देख कर अपना निरादर
और पांव पसारता है ।
दुख न जाता है दुखों के बीच
हिम्मत हारने से,
किन्तु दुख टिकता नहीं
उत्साह से ललकारने से ।

आलसी के पास यह
जीवन बिताना चाहता है ।

दुख अपने आप मे है
विश्व की सम्पति छिपाये
स्वागतो को देख डरता है
कि सम्पति लुट न जाये ।
प्रेम से भयभीत है पर
प्रेमियो से प्यार करता,
प्रेमियो का सर्वदा
सम्पत्ति से सत्कार करता ।

प्रेम से डर कर घृणा का
प्यार पाना चाहता है ।

विश्व दुख को प्राप्त कर
पहचानता अपने पराये,
दुख का अजन लगाकर,
विश्व ने नव नेत्र पाये ।
किन्तु सम्पति के क्षणो मे
नेत्र जिनके चौंधियाते,
और जो पुरुषार्थ के पथ से
चरण अपने हटाते ।

दुख उन्हें बढ़कर स्वय ही
काट खाना चाहता है ।
दुख भयकर रूप धर
हमको डराना चाहता है ।

मानव मुस्काना ठीक नही

औरो के दुख को देख-देख
मानव मुस्काना ठीक नहीं ।

है कौन कि जिस पर कभी नहीं
सकट के बादल छाये हों,
है कौन कि जिसके जीवन मे
आखो मे अश्रु न आये हो,
किसके प्राणो से पीडा ने
सबध न अपना जोडा है,
युग की निष्ठुरता ने न कभी
किसके सपनो को तोडा है,

औरो की असफलताओ का
आनन्द उठाना ठीक नहीं ।

सौभाग्य सदा ही मानव के
रहता कदापि अनुकूल नहीं,

इस जीवन के उपवन में भी
खिलते हर ऋतु मे फूल नहीं,
प्रतिकूल परिस्थितियां जीवन में
सब ही के आया करती हैं,
बैसाख जेठ की ऋतु सावन मे
नीर बहाया करती हैं;

पीडित प्राणी के प्राणों को
पीडा पहुचाना ठीक नहीं ।

यह महलो के मधुमय वैभव
जो आज हस रहे हैं भू पर,
कल परिवर्तन का महाचक्र
चल जायेगा इनके ऊपर ;
यह टूटे फूटे से खडहर
बन जायेगे प्रासाद कभी,
इनमे भी छलकेगा यौवन
यौवन मे मधु उन्माद कभी,

सम्पत्ति से मानव के महत्व का
मल्य लगाना ठीक नहीं ।

ओ मनुज मानवोचित गौरव
अपना न नष्ट हो जाने दो,
मानव अपनी चेतनता को
जडता में मत खो जाने दो,
मानवता से बढ़कर मानव का
कोई और महत्व नहीं,

भगवान न यदि मानव बनते
तो पा सकते देवत्व नहीं,
अतर की दुर्बलताओ को
मानव बहलाना ठीक नहीं ।
औरो के दुख को देख-देख
मानव मुस्काना ठीक नहीं ।

गूजते हैं गान मेरे

गूजते हैं बादलो की वेदना मे गान मेरे,
चपल चपला की चमक मे चिर व्यथित अरमान मेरे ।

व्योम भी करुणार्द्र हो कर
अश्रुकण बरसा रहा है,
इन्द्र-धनु टूटा हृदय
ससार को दिखला रहा है,
थपकिया देकर सुलाना
चाहता शीतल समीरण,
प्रखर होती जा रही है
किन्तु मेरी प्यास प्रति क्षण;

विश्व के सताप सारे आज है मेहमान मेरे,
गूजते हैं बादलो की वेदना मे गान मेरे ।

तप्त उर लेकर जलद मे
जा छिपा है अशुमाली,

किन्तु क्या उसने कभी भी
हृदय की ज्वाला बुझा ली,
सिन्धु के जलते हृदय को
शान्त जीवन कर सका क्या,
प्यास रेगिस्तान की
पावस कभी भी हर सका क्या,

क्यों मिटे उपचार से फिर आज दग्ध निशान मेरे,
गूंजते हैं बादलो की वेदना मे गान मेरे।

अब निराशा के क्षितिज पर
मुस्कराती दिव्य आशा,
आज आशा से मधुर
फलदायिनी मेरी निराशा,
वेदनाए कर सकेंगी
क्या कभी सहार मेरा,
वे स्वय ही बन चुकी हैं
आज तो आधार मेरा;

जन्म से ही प्रौढ़ पीडा मे पले है प्राण मेरे,
गूंजते हैं बादलो की वेदना मे गान मेरे।

आज न जाने क्यों रूठे है मेरे मन के मीत रे

आज न जाने क्यो रूठे हैं मेरे मन के मीत रे।

आज किसी की बाट जोहता विरहिन का विश्वास है
किन्तु न प्रियतम अब तक लौटे यह कैसा वनवास है,
नियत समय पर चांद सदा आता रजनी के पास है,
नियत समय पर फुलवारी मे खिल उठता मधुमास है,

मेरे ही पाषाण बनेंगे कभी न क्या नवनीत रे,
आज न जाने क्यों रूठे हैं मेरे मन के मीत रे।

सुधियो की सासो मे सिमटा दावानल ससार का
मधुऋतु का सहार हुआ पर दोष नहीं पतझार का,
बनी राजधानी शूलो की जो थी क्यारी फूल की
पाटल की सुरभित सुषमा को पदवी मिली बबूल की,

अब न महकता यह नन्दन वन चली वायु विपरीत रे,
आज न जाने क्यों रूठे हैं मेरे मन के मीत रे।

श्याम घटाएं कहीं न नभ मे, किन्तु दमकती दामिनी
कितने सूरज चाद उगे पर मिटी न मन की यामिनी,
प्रीति प्रणय की रीति तोडकर ममता से मुख मोडकर
राजहस उड गये किधर तुम मानसरोवर छोडकर,

अब न महकता यह नन्दन वन चली वायु विपरीत रे ।
आज न जाने क्यो रूठे है मेरे मन के मीत रे ।

नैनों से बाहर मत निकलो

नैनो से बाहर मत निकलो
मेरे आंसू, मेरे आसू ।

जिस अन्तर मे था चिर-निवास
वह शान्ति-सदन क्यो छोड चले,
मेरे अन्तर की उपज अरे क्यो
मुझसे नाता तोड चले,

क्या कष्ट वहा था बतलाओ
जो जीवन से अकुलाये हो,
दृग अम्बर मे पावस घन बन
जो आज बरसने आये हो,

ओ मौन तपस्वी व्यथित वीर,
तुम लौटो घर की ओर चलो,
नैनो से बाहर मत निकलो
मेरे आसू, मेरे आसू ।

मैंने कितने श्रम से पीड़ाओं पर
मुस्काना सीखा था,
दुखमय अतीत स्मृतियों को
हंसकर बहलाना सीखा था,

तुमने नैनों में आज उमड़
मेरा सारा श्रम व्यर्थ किया,
मेरे आंसू सच कहता हूं
यह तुमने बड़ा अनर्थ किया,

ओ दृढ़ता के संचित प्रयास
यों भावुकता में तुम न पलो,
नैनों से बाहर मत निकलो
मेरे आंसू, मेरे आंसू ।

मुझे बहारों से क्या प्रयोजन

पला हूं पतझार सा धरा पर,
मुझे बहारों से क्या प्रयोजन,
मिली है कांटों की सेज मुझको
सुमन के हारों से क्या प्रयोजन ।

बसंत बनकर सुरभि लुटाऊं,
नहीं मिला है नसीब ऐसा,
अतृप्त मरुभूमि की तृषा को
मृदुल फुहारों से क्या प्रयोजन ।

सदैव सिद्धान्त की शिखा पर
शहीद होता रहा शलभ जो,
रहा जनम से जो मौन साधक
उसे प्रचारों से क्या प्रयोजन ।

ससीम आसक्ति छू न पायी
असीम उल्लास के चरण भी,
मै एक मझधार की लहर हू
मुझे किनारो से क्या प्रयोजन ।

किसी के आश्वासनो का अनुचर
न बन सकी जिन्दगी हठीली,
समय के बढते हुए चरण को
है इन्तजारो से क्या प्रयोजन ।

मनुष्य होता तो कोई सुनता
किसी के दुख दर्द की कहानी,
यहा तो पत्थर के देवता हैं
इन्हें पुकारो से क्या प्रयोजन ।

असख्य आराध्य है, कहा तक
समर्पणो के सुमन सजाऊ,
रमा चुका एक को हृदय मे
मुझे हजारो से क्या प्रयोजन ।

जला निशा भर प्रदीप फिर भी
प्रभात का मुख न देख पाया,
दुखो की एकात सिसकियो को
द्रवित दुलारो से क्या प्रयोजन ।

न अब मुस्कराने को जी चाहता है

न अब मुस्कराने को जी चाहता है,
न आसू बहाने को जी चाहता है।

वही चादनी है वही चाद तारे
निशा है वही अपना आचल पसारे,
उसी भाति तो नीलिमा मे गगन की
है आकाश गगा के दोनो किनारे,

कभी इनमे मन डूबता था मगर अब,
इन्हे ही डुबाने को जी चाहता है।

हृदय मे सदा वेदनाए सजोए
अधर पर मधुर गीत गाये हैं मैंने,
अतिथि बनके आसू जो आये नयन मे
पलक पावडे ही बिछाये है मैंने,

मधुर वेदनाओं की वीरान महफिल
नहीं अब बसाने को जी चाहता है ।

कि मैने भी था एक वरदान पाया
कभी सुख उठाया, कभी दुख उठाया,
अधेरे मे ऊबा उजाले मे आया
उजाले से ऊबा अधेरा सुहाया,

मगर अब अधेरे उजाले से बाहर,
कहीं भाग जाने को जी चाहता है ।

मिटी वह भी सतोष की क्षीण रेखा
कि जिससे असतोष मेरा मुखर था,
अनेको विसम्वादियो से बचा कर
मै गाता चला आ रहा एक स्वर था,

उतारो चढावो मे बेताल होकर,
नहीं आज गाने को जी चाहता है ।

आँसू

आधार हृदय के है आसू ।

मेरे उर के बन्दीगृह मे
उद्‌गार हुए जब विकल बड़े,
व्याकुल प्राणो मे रह न सके
तो आसू बनकर निकल पड़े,
उद्‌गार हृदय के है आसू ।

जब जब निष्ठुर जग ने कुचली
कोमल भावो की कुसुम कली,
तब अश्रु सुधा सिंचन द्वारा
पीड़ित हृदयो को शान्ति मिली,
उपचार हृदय के है आंसू ।

जब जीवन नैया को जग ने
व्याकुल भावो का भार दिया,
तब अश्रु सहचरो ने आकर
भावो का भार उतार लिया,
पतवार हृदय के है आसू ।

जब हृदय-हृदय का मिलन हुआ
जब चिरसचित अनुराग जगे,
तब मोती मजु पिरो लाये
युग नयन परस्पर प्रीति पगे,
उपहार हृदय के है आसू ।

इनमे है भरी विवशताए
इनमे है हाहाकार भरा,
इन आसू की दो बूदो मे
पीडाओ का ससार भरा,
परिवार हृदय के है आसू ।

इन नयनो मे मन की करुणा
आसू बनकर छा जाती है,
उपकारी के उपकारो का
सावन सगीत सुनाती है,
आभार हृदय के हैं आसू ।

दुस्तर विरोध जिनके पग पर
किंचित भी बाधा ला न सके,
वे करुणा के दो आसू की
सरिता को तिरकर आ न सके,
मझधार हृदय के हैं आसू ।

जो नयन न सीख सके अब तक
इन व्याकुल नयनो की भाषा,
वे समझ सकेंगे भला कभी क्या
इन आसू की परिभाषा,
अधिकार हृदय के है आसू,
आधार हृदय के हैं आसू ।

अब कभी बसंत न आये

मै रोता हू रोने दो
कोई मुझको न हसाए,
मेरे उजडे उपवन मे
अब कभी बसत न आये ।
यह मरु प्रदेश था केवल
चुपचाप पडा सोता था,
मादकता का मृदु नर्तन
यद्यपि न कभी होता था ।
पर चाह इसे भी कब थी
मै हरा भरा हो जाऊ
औरो की देखा-देखी
मै भी समोद लहराऊ ।
पक्षियो तुम्हारा क्या सच
मैने आह्वान किया था,
तुमने ही मुझे अयाचित
कुछ आकर दान दिया था ।

बसंत बहार

श्यामल वारिद मालाओ
तुम भी सच-सच बतलाओ,
क्या मैं प्रार्थी था तुमसे
इस मरु प्रदेश पर छाओ।
तुम उमड घुमड कर आये
रिमझिम रिमझिम कर बरसे,
फिर मनोभाव के मधुकर
अनुकूल समय मे सरसे।
मैं फूल उठा उस सुख से
हा, मै निजत्व भी भूला,
उल्लास भरा मधु यौवन।
आनन्द हिंडोले झूला।
रगीन तितलिया आकर
मेरा उन्माद जगातीं,
आशाए उन्मादिन बन
स्वर्णिम ससार सजातीं।

सुरभित समीर इठला कर
अब करता था रगरलिया,
अब खिलने ही वाली थीं
कुसुमो की कोमल कलिया।
पर रे अदृश्य, यह तूने
हा, क्या से क्या कर डाला,
उस आशा कुसुम लता पर
पड गया कहां से पाला।

रह गया अधूरा ही वह
कल्पना-चित्र प्रिय मेरा,
मरुथल रजनी मे आया
तू क्यो था स्वर्ण सबेरा।
अब भी उस बीते युग की
जब याद कभी आ जाती,
कल्पना क्षितिज पर अपना
फिर से वह चित्र बनाती।

पर नहीं चाहिए मुझको
तेरी वह अस्थिर झाकी,
है 'नहीं-नहीं' परिभाषा
तेरी अद्‌भुत 'हा-हा' की।
कल्पने! सदा तुम यो ही
रहना सुदूर रेखा सी,
मत सत्य कही हो जाना
विद्युत की क्षणिक छटा सी।
आशा को घूघट मे रख
तुम नहीं क्षितिज पर चमको,
मै स्वय दूर कर लूगा
अपने इस मानस तम को।

मधुमास मुबारक हो तुमको

मुझको मेरा पतझड़ प्रिय है,
मधुमास मुबारक हो तुमको।

महलो की वह दीवारे जो
करती श्रृंगार गुलामी का,
मणि जटित सुमन की शैयाए
जो हो उपहार गुलामी का,

उन्मुक्त मनस्वी मन मेरा
स्वीकार उन्हें कब पर पाया,
प्रतिबन्ध लगे मधु अधरो का
उल्लास मुबारक हो तुमको।

महफिली तरानो से सुन्दर
है झरनो का एकान्त रुदन,
तुम गाओ गीत बहारो के
मुझको तो भाता है सावन,

मन की ममता से भरी हुई
गाथाएं मुझको प्यारी हैं,
निर्मम सत्यों से भरा हुआ
इतिहास मुबारक हो तुमको ।

परिवार जहां पीडाओं का
हंसकर बहलाया जाता है,
जीवन-भर के दुख दर्दों को
हंसकर सहलाया जाता है,

हर्षों, संघर्षों से पूरित
यह आंगन मुझको प्यारा है,
दुनिया वालों से दूर-दूर
सन्यास मुबारक हो तुमको ।

मुझको मेरा पतझड प्रिय है,
मधुमास मुबारक हो तुमको ।

पतझर

मै पतझर हू, यह निष्ठुर जग
क्यो करता मुझको प्यार नहीं ।

कोमल कलरव से भरा हुआ
बचपन भी मैने देखा है,
उन्माद मधुर उल्लासपूर्ण
यौवन भी मैने देखा है,

मेरा शृंगार रचाने को
रगीन तितलिया आती थीं,
मधुमय पराग पर मदमाती
मधुपावलिया मडराती थीं,

अब सकट मे इस वसुधा का
है प्राप्त मुझे सत्कार नहीं ।

सौभाग्य पवन हिंडोलो पर
मुझको दिन रात झुलाता था,
निज चचल अचल मे मेरा
सौरभ भर-भर ले जाता था,

ये पावस के जलधर मुझ पर
अमृत की वर्षा करते थे,
मेरे अधरों को छूने को
मधु प्याले तरसा करते थे;

अब पानी की दो बूंदें भी
मिल पातीं मुझे उधार नहीं ।

मेरे वियोग मे व्याकुल हो
कोयल डाली-डाली डोली,
मेरे ही अन्तर की पीडा
उसके कम्पित स्वर मे बोली,

पर उन दर्दीले गीतो का
दुनिया रहस्य कब जान सकी,
अन्तर मे निहित वेदना को
यह दुनिया कब पहचान सकी,

दो शब्दो का भी इस जग से
मिल सका मुझे उपचार नहीं ।

जीवन सुख के सारे साथी
अब आख चुरा कर चले गये,
दुख की इन घडियो मे विलास
वैभव ठुकरा कर चले गये;

बसंत बहार

जग के क्षणभंगुर वैभव का
अनुराग दिखाने आया हूं,
मधु प्यालों में जो छिपी हुई
वह आग दिखाने आया हूं,

माया की अस्थिर छाया पर
जग का कोई अधिकार नहीं।

जग, मुझे उपेक्षित तुम न करो
मुझमे फिर आकर्षण होगा,
तुम जिसे समझते मृत्यु वही तो
जीवन का कारण होगा;

मेरे बलिदानो पर बसंत का
फिर होगा निर्माण कभी
मेरे कठोर कंकालो मे
लहलहा उठेंगे प्राण कभी।

तुम मत समझो इस तन मे अब
होगा रस का संचार नहीं,
मै पतझड हूं यह निष्ठुर जग
क्यो करता मुझको प्यार नही।

कभी भी प्यार का नाता
किसी से हम न जोड़ेंगे

बड़ा उल्लास लेकर मै बढ़ा था प्यार के पथ पर,
बड़ा विश्वास लेकर मै बढ़ा था प्यार के पथ पर।

हुआ जब प्यार मे धोखा तड़प कर प्राण यो बोले,
कभी भी प्यार का नाता किसी से हम न जोड़ेंगे।

मनोहर वाटिका मे मुस्कराते फूल को देखा,
बढ़ाया हाथ पर मैने न उसमें शूल को देखा।

गड़ा जब हाथ मे काटा तड़प कर प्राण यो बोले,
नहीं हम वाटिका मे भूल कर भी फूल तोड़ेंगे।

उसी क्षण फिर हृदय ने प्यार के ससार को देखा,
उसी क्षण फिर हृदय ने फूल के श्रृ गार को देखा।

मचल उठा हृदय पिछली तड़प बोली रुको ठहरो,
हृदय बोला कि कुछ भी हो न ये अभिसार छोड़ूगा।

तड़प कर वेदना कहती, नहीं मैं स्वर्ग पर मरती,
हृदय की प्यास कह उठती, नहीं मै नर्क से डरती।
हृदय आनन्द मे पिछली तड़प को भूल जाता है,
तड़पता है तो कहता वासनाओ को निचोड़ेंगे।
कभी भी प्यार का नाता किसी से हम न जोड़ेंगे।

टूटे हृदय की पीर

क्या करेगा जान कर
टूटे हृदय की पीर कोई,
क्या बना देगा अरे
बिगड़ी हुई तकदीर कोई।

क्या करेगा पूछ कर
ससार मुझसे नाम मेरा,
जान कर ही क्या करेगा
आज कोई काम मेरा।

विश्व चाहेगा मनोरजन
नही मै दे सकूगा,
अश्रु सरिता त्याग
मरुथल मे न तरणी खे सकूगा।

प्रखर पावक को बना
देगा अरे क्या नीर कोई,
क्या करेगा जानकर
टूटे हृदय की पीर कोई।

जब हृदय की वेदना ने
आसुओ के गीत गाये,
विश्व वासी तब कला
उसको समझ कर मुस्कराये।

विश्व क्या अगार पथ पर
सग मेरे चल सकेगा,
विश्व विष की घूट पी
क्या सग मेरे चल सकेगा।

नर्क को देगा बना क्या
स्वर्ग की तस्वीर कोई,
क्या करेगा जान कर
टूटे हृदय की पीर कोई।

प्राण से पीड़ा बदलना
है यही व्यापार मेरा,
बन सकेगा विश्व मे
कोई न साझीवार मेरा।

आज इस जलते हृदय के
पास कोई भी न आए,
आज मेरे साथ कोई
क्यो हृदय अपना जलाये।

भाग्य हो विपरीत तब
चलती नहीं तदबीर कोई,
क्या करेगा जान कर
टूटे हृदय की पीर कोई।

मुझसे शूल कहा करते हैं

मेरे पग तल चूम–चूम कर
मुझसे शूल कहा करते है,

फूल कि जिनको धारण करके
पुलकित हो उठती हरियाली,
नन्हें-नन्हें पेंग झुलाती
जिन्हें नेह से डाली-डाली,

मधुकर अपने स्वर गुजन मे
जिनके मधुर गीत गाते है,
जिन पर पावस के घन आकर
अमृत घट बरसा जाते हैं

कांटों की कठोर शैया पर
वे ही सुमन रहा करते हैं,
मेरे पग तल चूम-चूम कर
मुझसे शूल कहा करते हैं।

जब सौरभ की अगड़ाई ली
फूलों के मादक प्राणों ने,
खुल खिलने के स्वप्न सजाये
जब फूलो की मुस्कानों ने,

तभी किसी ने कलित
कल्पनाओं से भरे कुसुम को तोडा,
निठुर नियति के कुटिल करो ने
फूलों का अरमान मरोडा,

पुष्प पराग कोष से फिर भी
सौरभ स्रोत बहा करते है,
मेरे पग तल चूम-चूम कर
मुझसे शुल कहा करते हैं।

कह रहे हैं शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो

कह रहे है शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो।

रूप के प्यासे पतंगे
दीप को फेरी लगाते,
और जब दीप बुझा तो
पास भी उसके न आते,
किन्तु जलना और बुझना
सृष्टि का व्यापक नियम है,
आज है जो पथ दुर्गम
कल वही बनता सुगम है,
फूल थे हमने दिये अब कंटकों का हार ले लो,
कह रहे हैं शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो।

जब रुपहली रागिनी
थी चांद ने छेड़ी गगन में,
झिलमिलाती थिरकती सी
हर किरन थी मुस्करायी,
किन्तु कब रहते सदा हैं
एक ही से दिन किसी के,

चार दिन की चांदनी बीती
अंधेरी रात आई,
नील नभ से मिल रहे अंगार के उपहार ले लो,
कह रहे हैं शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो।

प्रेम हम करते जिसे
बस सुख उसी का नाम है,
हो न जिससे प्रेम हमको
दुख वही परिणाम है,
सुख नही कुछ, दुख नही कुछ
देखने का फेर है,
दृष्टि का यदि भेद बदले
शांति मे क्या देर है,
साधना के ओ पथिक, तुम दृष्टि का विस्तार ले लो,
कह रहे है शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो।

आज मुर्झाया हृदय है
कल यही खिल जायगा,
विष मिला है आज जो
पीयूष भी मिल जायगा,
पूस की बदली कि छिन मे
धूप, छिन मे छाह है,
जिन्दगी के भार को थामे
किसी की बाह है,
तुम किसी भी इष्ट के विश्वास का आधार ले लो,
कह रहे हैं शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो।

बोलो ओ, सुकुमार कली

तुम किसका ध्यान किया करती हो
बोलो ओ, सुकमार कली !

ओ, मूर्तिमान छवि की रानी
ओ मञ्जु मधुरिमा उपवन की,
ओ लाज भरी सकुचाई सी
मधुवन की मधुर दुलार पली,
तुम किसका ध्यान किया करती हो
बोलो ओ, सुकमार कली !

तुम अपने ही उर सम्पुट मे
मधु सौरभ सचित करती हो,
क्यो इन मधु प्यासे मधुपो को
मधुरस से वचित करती हो,
बोलो मुख खोलो कहो भला
क्या चुप रहना है बात भली,
कुछ तो बोलो सुकमार कली ।

जल बिन्दु क्यों इठला रहे हो

स्निग्ध पकज पर पडे
जल बिन्दु क्यो इठला रहे हो ।

अरुण दल पर मजु मुक्ता सी
सजल छवि छा रही है,
या उषा के अक मे
नव दीप्ति शोभा पा रही है,

किन्तु कितने क्षण कहो
सुकमार यह जीवन रहेगा,
और जीवन मे कहो कब तक
मधुर यौवन रहेगा,

विश्व की अनिवार्य भगुरता
भुलाए जा रहे हो ।

एक हल्की सी हवा मे ही
हवा हो जाओगे तुम,
नीर से निर्मित हुए हो
नीर मे खो जाओगे तुम,

डूब आयेंगे तुम्हारे
यह मधुर अरमान सारे,
धूल मे जैसे कि मिलते
फूल के अभिमान सारे,
आज अपने आपमे ओ बिन्दु
क्यो न समा रहे हो ।

अपना ससार बसा न सका

मैं इस दुनिया से दूर कहीं
अपना ससार बसा न सका,

इस दुनिया मे मैं हू, मुझमे
सचित मधुमय आशाए हैं,
आशाओ मे उल्लास भरी
कितनी ही अभिलाषाए हैं,
अनजान क्षितिज पर मैं अपना
यह सचित कोष लुटा न सका।

इन सबको अपने साथ लिये
मै युग-युग से चलता आया,
युग-युग से दीप-शिखा पर मै
परवाना बन जलता आया,
मैं जल-जलकर जी उठा,
विश्व मेरा अस्तित्व मिटा न सका।

जग बोला यह विष है, पर मैं
पीयूष समझ पीता आया,
जग बोल उठा मरना होगा
मैं मर मरकर जीता आया,
कल्पित माया की छाया पर
मैं प्रस्तुत को ठुकरा न सका।

ये चिर परिचित पीडाए हैं
युग-युग की इनसे उलझन है,
पर इस उलझन मे जाने क्या
कैसा मधुमय आकर्षण है,
इस उलझी हुई पहेली की
उलझन अब तक सुलझा न सका।

जीवन पर कितना भार लिए जीता हूँ

अन्तर मे विविध भावनाए
प्रति क्षण मडराया करती हैं,
अनुभूति अनेको सुख दुख की
नित रोया गाया करती हैं,

पर मै उनका रोना गाना
सुनकर भी समझ नहीं पाता,
कैसा व्याकुल व्यापार लिए जीता हू,
जीवन पर कितना भार लिए जीता हू।

जीवन के पथ पर एक ओर
मुझको निर्माण पुकार रहा,
दूसरी ओर प्रतिकूल
परिस्थितियो का बल ललकार रहा,

मैं समझ नहीं पाता किसको
अपना लू किसको ठुकरा दू,
सघर्षो का ससार लिए जीता हू,
जीवन पर कितना भार लिए जीता हू।

कितने श्रमिकों के संचय पर
जीवन निर्माण किया मैंने,
कितने मस्तिष्कों के श्रम का
संचित साहित्य पिया मैंने,

पर जगती के इस ऋण का मैं
कुछ भी परिशोध न कर पाया,
मैं कण-कण का उपकार लिए जीता हूं,
जीवन पर कितना भार लिए जीता हूं।

जागे आज व्यथा के भाग

जागे आज व्यथा के भाग।
जो कवि से उत्पन्न हुआ है अब उसको अनुराग,
जागे आज व्यथा के भाग।

हृदयहीन से प्रीति लगाकर उसने था अब तक क्या पाया,
ज्यों-ज्यों उसे पकड़ने दौड़ी त्यों-त्यों वह उससे कतराया,
अब आनन्द अधिक आएगा मिली आग से आग,
जागे आज व्यथा के भाग।

मेरे व्याकुल सप्त स्वरों पर, शब्दराशि बनकर वह आयी,
उष्ण उसांसों से भी मैंने शीतल मन्दाकिनी बहायी,
कल-कल छल-छल ध्वनि ने गाया अपना व्यथित बिहाग,
जागे आज व्यथा के भाग।

कितने मानव तुझे प्राप्त कर इस जग में बेमौत मरे,
केवल कवि है जो मर कर भी, तुझको जग मे अमर करे,
कवि ने आंखों मे पाला है तेरा अचल सुहाग,
जागे आज व्यथा के भाग।

बादल बात किया करते हैं

नभ के नीले पथ पर आकर
बादल बात किया करते हैं ।

यह संसार में रहने वाले
अन्तर्दाहों में पलते हैं,
ये हिमगिरि के आदि निवासी
अपनी राहों में गलते हैं,

वसुधरा की उष्ण उसासों ने
इनका आह्वान किया है,
मदमाते मधुपों की टोली ने
इनका गुणगान किया है,

मरती धरती के जीवन पर
स्वर्ण प्रभात किया करते हैं,
नभ के नीले पथ पर आकर
बादल बात किया करते हैं ।

दूर क्षितिज से उमड़ घुमड़कर
ये काले घुघराले बादल,
गगन अटारी पर चढ़ जाते
रस बरसाने वाले बादल,

नभ प्रांगण के समरांगण मे
बजती है इनकी रणभेरी,
चन्द्रहास चमकाते फिरते
ये अकाल के अमर अहेरी,

रवि के रथ को घेर घटा में
दिन को रात किया करते हैं।
नभ के नीले पथ पर आकर
बादल बात किया करते है।

सुखमय कब है संसार

सुखमय कब है ससार सखे ?

रो कर हस कर दिन काट लिये
तारो मे उलझ गयीं रातें,
अपने से कब अवकाश किसे
जो सुने किसी की दो बातें,

मतलब की सारी दुनिया है,
कोई न किसी का यार सखे ।

कितने सुन्दर, कितने सुरम्य
ये ऊचे महल मकान बने,
गृह कलह विविध चिन्ताओं से
हैं भीतर किन्तु मसान बने,

हम शांति समझते थे जिसको
निकला वह हाहाकार सखे ।

ये रक राव, त्यागी गृहस्थ
अपनी-अपनी उलझन में है,
विपदा चिन्ताए पता नहीं
कितनी किसके जीवन मे हैं,

क्या जाने कौन चलाता है,
कैसे जीवन व्यापार सखे ।

मेरे सा कोई दुखी नहीं
छोडो प्रियवर यह मिथ्या भ्रम,
इस दुनिया मे आकर दुख से
हैं बच न सके भगवान स्वय,

बस, यही सोचकर दुखी हृदय,
कुछ तो खो ले उर भार सखे ।

सुखमय कब है ससार सखे !

तुम मुझको अपना न सकोगे

तुम मुझको अपना न सकोगे।

मै पथरीली उबड़-खाबड़
कठिन भूमि पर चलने वाला,
मै अपने ही भावो की
भीषण ज्वाला मे जलने वाला,

दिल मे आग लगा न सकोगे,
तुम मुझको अपना न सकोगे।

दुनिया के कोलाहल मे
उलझा सुलझा यह जीवन मेरा,
रेगिस्तानो के अधड़ मे
डाल चुका हू अपना डेरा,

प्रिय तुम मुझ तक आ न सकोगे,
तुम मुझको अपना न सकोगे।

मैं अपनी निर्जन कुटिया मे
चुपके - चुपके गा लेता हू,
रो लेता हू, हस लेता हू
अपना मन बहला लेता हू,
रो कर हस कर गा न सकोगे,
तुम मुझको अपना न सकोगे ।

जिसको जग ठुकरा देता है
उसको भी मैं गले लगाता,
सर्वनाश की बेला पर भी
मै निर्भय होकर मुस्काता,
मुझसे नेह निभा न सकोगे,
तुम मुझको अपना न सकोगे ।

मैं तुम्हारे पास ही तो हूँ

जो युगो सचित निराशा को
नया उत्साह देता,
एक आशा की लहर पर
कामना की नाव खेता,
जिस मधुर अनुभूति का
कर्षण तुम्हे घेरे रही है
उस अमर आनन्द का
विश्वास ही तो हू।

मैं तुम्हारे पास ही तो हू।

नित्य ही तुमसे मिलन का
प्रण निभाता आ रहा हू,
मै तुम्हारे ही स्वरो मे
गीत गाता आ रहा हू,
आज तक जिसका मधुर
रसपान कर तुम छक न पाये,
वह तुम्हारे हृदय का उल्लास ही तो हू।

मै वही तो हू जिसे तुम
रूप मे लखते निरन्तर;
और रसना का मिला जो
तृप्तियो मे रस मधुरतर,
विश्व की रगीनियो मे
वर्ण मेरा ही मुखर है,
पुष्प सौरभ की मदिर
उच्छ्वास ही तो हूं।

देख कर भी तुम न देखो
जान कर भी तुम न जानो,
प्राण की अनुभूति मे
पहचान कर भी तुम न मानो,
लक्ष्य तक आते निरन्तर
किन्तु आकर लौट जाते,
इस तुम्हारी भूल का
इतिहास ही तो हू।
मै तुम्हारे पास ही तो हू।

मै चेतन हूँ

मै चेतन हू, जड जगती मे जीवन का मेला करता हू ।

यो तो इस जीवन मे मुझको
कितने साथी मिल जाते हैं,
पर जीवन पथ मे कितने दिन
वे साथ निभाने पाते हैं,

सच पूछो तो अपनी राहें मै पार अकेला करता हू ।

कितने सुख आये चले गये
कितने दुख आये बीत गये,
कितने मेरे अनुकूल बने
कितने मुझसे विपरीत गये,

मैं मौन भाव से जीवन के सुख-दुख को झेला करता हू ।

जिसमे मैने सुख मान लिया
वह मधुरस बरसा आता है,
जिसमे मैंने दुख मान लिया
बन कर संताप सताता है;

जग के उपकरणो मे अपनी अनुभूति उडेला करता हू ।

मेरे नैनो के आसू को
जग के जीवन में छार मिला,
मेरे अन्तर की पीडा को
पीडाओ का उपचार मिला,

इन प्राणो मे पीडाओ का मै नाटक खेला करता हू ।
मै चेतन हू, जड जगती मे जीवन का मेला करता हू ।

बताओ तुम कौन हो

बताओ तुम कौन हो हृदय मे
प्रकाश बन मुस्कराने वाले।
न जाने कब से निविड तमिस्रा
प्रयाण को रुद्ध कर रही थी,
अलस भरी सी प्रगाढ तन्द्रा
सुदूर क्षिति से उभर रही थी,
झकोर कर सुप्त चेतना को
चहल पहल को जगाने वाले,
बताओ तुम कौन हो हृदय मे
प्रकाश बन मुस्कराने वाले।
विदा की वेला, निशा के आसू
उषा का आचल भिगो रहे थे,
हरित धरा के चरण कमल को
तरल तुहिन बिन्दु धो रहे थे,

बसंत बहार

अरुण किरण की पलक उठा कर
हृदय कमल को खिलाने वाले,
बताओ तुम कौन हो हृदय मे
प्रकाश बन मुस्कराने वाले।
कुसुम की कमनीय क्यारियो से
विकास की वाटिका सजा दी,
दुखो के काटो के बीच तुमने
गुलाब सी जिन्दगी खिला दी,
पराग के कोष मे सुरभि भर
उदार हाथो लुटाने लाले,
बताओ तुम कौन हो हृदय मे
प्रकाश बन मुस्कराने वाले।

गुनगुनाता जा रहा हूं।

आज आया हूं यहां मैं,
विश्व का विश्वास लेकर;
आज आया हूं यहां मैं
विश्व भर की आश लेकर;

पादपद्मों में तुम्हारे
सर झुकाता जा रहा हूं।
गुनगुनाता जा रहा हूं।

आपको अपना समझकर
वेदना के द्वार खोले,
सब निवेदन कर चुका मैं,
किन्तु तुम कुछ भी न बोले,

इस तुम्हारी मौनता पर
मुस्कराता जा रहा हूं।
गुनगुनाता जा रहा हूं।

एक निर्धन भी यहां,
करता अतिथि सत्कार कैसा ?
फिर त्रिलोकीनाथ का है,
यह निठुर व्यवहार कैसा ?

इस समस्या जाल में
कुछ भी भुलाता जा रहा हू ।
गुनगुनाता जा रहा हू ।

भूलता सा जा रहा हू,
वेदना का भार भगवन् !
भूलता सा जा रहा हू
नाथ ! मै अपना निवेदन ।

हृदय के आवेश मे मै
कुछ सुनाता जा रहा हू ।
गुनगुनाता जा रहा हू ।

मै अनादि अनत का गूढ रहस्य

(१)

जिस सत्य पै ससृति निर्भर है,
उस व्यापक सत्य का सत्व हू मै ।
जिससे बना अमृत अमृत है,
वह अमृत का अमरत्व हू मै ।
महामानव हू महामान्यता का,
मतिमान महान महत्व हू मै ।
हू अनादि अनत का गूढ रहस्य,
त्रिकाल त्रिलोक का सत्व हू मै ।

(२)

क्षणभगुर विश्व सा हेय नहीं मै,
अविनश्वर हू, उपादेय हू मै ।
विधना का विधायक हू, विधना हू,
विधान का इष्ट विधेय हू मैं ।

जो कवीश्वरो से सदा गाया गया,
उस गान का अंतिम ज्ञेय हू मै ।
जो ऋषीश्वरों से सदा ध्याया गया,
उस ध्यान का अंतिम ध्येय हू मै ।

(३)

परिवर्तन के महामंत्र पै मै
नित स्वांग नवीन सजाता रहा ।
अभिनेता बना जग के परमाणुओ
को अभिनेय बनाता रहा ।
जग के इस शुष्क मरुस्थल मे
मैं बसंती छटा छिटकाता रहा ।
मदमाती मनोरम क्यारियो का
मरुभूमि को दृश्य दिखाता रहा ।

(४)

इस विश्व से चाहा गया कभी मै
इस विश्व को चाहने वाला बना ।
जलवायु वनस्पति द्वारा कभी
मैं पीयूष हलाहल हाला बना ।
कभी वेश मे आके वसुन्धरा के,
मनुजो का निवास निराला बना ।
कभी गूढ रहस्य की माला कभी
मै रहस्य को खोलने वाला बना ।।

(५)

तुम्हें ढूढने था निकला पर मै
पथ की अधियारी बना ही रहा ।

नहीं साधना पूरी हुई अपनी,
था दुखारी, दुखारी बना ही रहा ।
सदा याचना लक्ष्य हमारा रहा,
था भिखारी, भिखारी बना ही रहा ।
तुम्हें देव न देख सका दिल मे,
प्रतिमा का पुजारी बना ही रहा ।

(६)

हममें तुम ही तो रमें हुए हो,
यह भेद तुम्हारा न जान सका ।
परभाव विभाव हटा करके,
कभी आत्म स्वभाव मे आ न सका ।
निज देह की सौरभ को मृगतुल्य
नहीं कभी मैं पहचान सका ।
सदा पास तुम्हारे निवास किया,
फिर भी न तुम्हे मै जान सका ।

(७)

ध्यान मे तन्मयता यो बढे,
रहे भेद न ध्याता न ध्येय न ध्यान मे ।
केवल ज्ञान स्वरूप बनू
रहे भेद न ज्ञाता न ज्ञेय न ज्ञान मे ।
एक ही शक्ति के नाम हैं दो,
नहीं भेद महानता और महान मे ।
एक ही वस्तु के नाम है दो,
नहीं अन्तर भक्त मे औ' भगवान मे ।

मुक्ति पथ का पथिक

मुक्ति पथ का पथिक ध्यान मे लीन है
चूमने को चरण साधनाए चलीं,
भारती ने सजायी अमर आरती
शुचि यशोगान करती ऋचाए चलीं ।

जड प्रकृति ने कहा—यह अरे कौन है
जो परिधि तोडता आज व्यवधान की,
श्रृंखलाए जिसे बाध पाती नहीं
मान-अपमान अभिशाप वरदान की ।

सकटो को चुनौती दिये जा रहा,
यह तपस्वी तरुण एक त्यागी बना,
और आकर्षणो को तिरस्कृत किये
कौन है मौन यह वीतरागी बना ।

ध्यान के सिधु को सोखने के लिए
वेग से सकटो की शिलाए चलीं,
मुक्ति पथ का पथिक ध्यान मे लीन है
चूमने को चरण साधनाएं चलीं ।

वस्त्र भूषण अलकार को त्यागकर
जिसने अम्बर दिशाओ का धारण किया,
बन दिगम्बर महामुनि तपोनिधि सरल
मोहमय भावना का निवारण किया।

उस महावीर के ध्यान की ढाल से
तीक्ष्णतम काम के बाण कुठित हुए,
और ऋतुराज के मद भरे उपकरण
व्यर्थ से सिद्ध हो भू विलुठित हुए।

आत्म अनुभूति की शुचि सुधा धार से
हार कर विषमयी वासनाए चलीं,
मुक्ति पथ का पथिक ध्यान मे लीन है
चूमने को चरण साधनाए चलीं।

भूख की, प्यास की, शीत की, घाम की,
हस्तिया हार कर गिडगिडाने लगीं,
विषभरी क्रूर हिसक पशु टोलिया
आक्रमण कर थकी सिर झुकाने लगीं।

उत्तरोत्तर विकासोन्मुखी वृत्ति का
स्पर्श पाकर गरल भी सरल हो गया,
घोर तमतोम से युक्त वातावरण
शारदी ज्योत्स्ना सा धवल हो गया।

साधना सूर्य की ज्योति के पुज से
लुप्त होती नियति की निशाए चलीं,
मुक्तिपथ का पथिक ध्यान मे लीन है
चूमने को चरण अर्चनाए चलीं।

त्याग की आग में राग ईंधन बना,
आत्म अनुराग कचन निखरने लगा,
रूप सत्य, शिव, सुन्दर का स्वय
मन क्षितिज पर उषा सा उभरने लगा।

यह अखिल लोक आलोक से भर गया।
दीप्ति ऐसी जगी विश्व कल्याण की,
भावना एक नूतन प्रवाहित हुई
विश्व के प्राण मे आत्मकल्याण की।

पर विजय गीत गाती हुई लोक मे
सत्य श्रद्धामयी वन्दनाए चलीं,
मुक्ति पथ का पथिक ध्यान मे लीन है।
चूमने को चरण अर्चनाए चलीं।

जग में वही महान हैं

विजय पराजय के क्षण मे जो
रहते सतत समान है
वही वीर है, वही धीर हैं,
वही पुरुष मतिमान हैं,
जीवन पथ पर वैभव और पराजय
दोनो ही आते हैं,
निस्पृहता से श्रेष्ठ तपोनिधि
दोनो ही को अपनाते हैं,
दृढ़तापूर्वक प्रगति पथ पर
जो रहते गतिमान हैं,
वही वीर हैं, वही धीर हैं,
जग में वही महान हैं।

लक्ष्य-बिन्दु के ही प्रकाश से
सतत प्रेरणा लेते हैं जो,
दुख की बदली सुख की बिजली
से न प्रभावित होते हैं जो,
विचलित होते कभी न जिनके
जीवन के अभियान हैं,
वही वीर है, वही धीर हैं,
जग मे वही महान् है।

तब शूल फूल बन जाते हैं

जब किसी साधना की ज्वाला हो जाती है साकार सखे,
जब निर्भयता ही जीवन का हो जाती है आधार सखे,
जब आशा मे, अभिलाषा मे, मचता है कोई द्रोह नही,
जब जीवन मे, रह जाता है जीवन का किंचित् मोह नहीं,

सकल्प पूर्ति के हेतु वीर जब निज सर्वस्व लुटाते है,
स्वयमेव सखे जीवन पथ के सब शूल फूल बन जाते है।

जीवन तन्त्री के सभी तार जब भरते है झकार एक,
जब हो जाते है जीवन के उद्देश्य और व्यापार एक,
कर्तव्य पूर्ति ही होता है जब जीवन का आदर्श चरम,
जब निश्चित पथ पर बढता है ध्येय धार कर जीवनक्रम,

हसकर विपदाओ को सहर्ष जब सैनिक गले लगाते हैं,
स्वयमेव सखे जीवन पथ के सब शूल फूल बन जाते हैं।

विश्वास हृदय मे आता है, जब दृढ़ता बन कर मूर्तिमान,
आह्वान समझने लगता है, हैं नहीं प्राण के लिए प्राण,
जचता है जीवन का महत्व जब मरने के मैदानों मे,
जब अमरपुरी का दिव्य द्वार दिखता है तीक्ष्ण कृपाणो में;
जब वीरो के बलिदानो से कर्तव्य कुंज सिंच जाते हैं,
स्वयमेव सखे, जीवन पथ के सब शूल फूल बन जाते हैं।

कर्मठ सेनानी का जिसने अपकार किया उपकार हुआ,
उसके हित भीषण विषधर भी सुन्दर फूलो का हार हुआ,
अपमान किया, सत्कार मिला, अभिशाप दिया, वरदान बना,
उपसर्ग सहर्ष वहन करके यह मानव ही भगवान बना;

सारे संहारक उपादान विद्रोह मचाने आते हैं,
पर दिव्य शक्तियो के समक्ष सब शूल फूल बन जाते हैं।

अपने ही बांधे बंधन क्यों आज मुझे स्वीकार नहीं

बरबानो से प्यार मुझे
क्यो अभिशापो से प्यार नहीं,
अपने ही बाधे बधन क्यो
आज मुझे स्वीकार नहीं।

अमृत पाने की आशा से
मैने सागर मथ डाला,
अमृत मिला परन्तु साथ ही
मिला हलाहल का प्याला,

अमृत लेना चाह रहा मै
पर विष का उपहार नहीं,
बरबानो से प्यार मुझे
क्यों अभिशापों से प्यार नहीं।

मेरे ही तो जीवन तरु में
फूल उगे हैं शूल भी,
मेरे ही उपवन मे उपजे
पाटल और बबूल भी;

मैं बसंत का स्वागत करता
भाता क्यो पतझार नहीं,
अपने ही बांधे बंधन क्यो
आज मुझे स्वीकार नहीं।

मन करता है मान और
सम्मान मेरा मनमाना हो,
मेरे सुख का राजभवन यह
कभी न जीर्ण पुराना हो,

किन्तु सरल बनकर औरो का
किया कभी सत्कार नहीं,
वरदानो से प्यार मझे
क्यो अभिशापो से प्यार नहीं।

उस दिन आंसू की बेला मे
मैने तुम्हें पुकारा था,
उल्लासों की चहल पहल में
लेकिन तुम्हें बिसारा था;

जाने क्यों अन्तर मे होता
समता का सचार नहीं,
वरदानो से प्यार मुझे
क्यों अभिशापों से प्यार नहीं।

प्रत्येक समय संसार नया

ससार पुराना है, परन्तु
प्रत्येक समय ससार नया।

जीवन मे कितने बीत चुके
मधुमय आकर्षण के प्रसग,
पर आने वाले अवसर मे है
नव आकर्षण, नव उमग

हर बात पुरानी होकर भी
हो सकती है हर बात नयी,
बरसात बसत पुराने है
पर हर बसत बरसात नयी,

जग वही, वही उपकरण, किन्तु
प्रत्येक बार आधार नया।

जीवन सरिता में कितनी ही
हो चुकीं तरंगित आशाएं,
हो चुकीं तिरोहित जीवन में
कितनी ही मधुमय अभिलाषाएं,

पर भावी युग की आशाएं
प्रस्तुत करतीं उल्लास नया,
युग की अतीत घटनाएं ही
बन कर आतीं इतिहास नया,

यह वर्तमान केवल अतीत का
परिवर्तित आकार नया,
संसार पुराना है, परन्तु
प्रत्येक समय संसार नया।

यह सारा जग तिनका है

मैने पूछा, मैने पूछा,

मैने पूछा इस दुनिया से—

यह सारा जग किनका है ?

तिनका एक झपट कर बोला—

यह सारा जग तिनका है।

मैने पूछा, मैने पूछा,

मैने पूछा इस दुनिया से—

किसका जन्म निरर्थक है ?

तिनका बोला—जन्म धार कर

हुआ नहीं जो तिनका है।

मैने पूछा, मैने पूछा,

मैने पूछा जीवित होकर

कौन मृतक के तुल्य यहां ?

तिनका बोला—भले जनो मे

नाम न आता जिनका है।

बसंत बहार

मैंने पूछा, मैंने पूछा,

मैंने पूछा इस दुनिया से—

किसका कौन सहारा है ?

तिनका बोला—डूब रहे को

सदा सहारा तिनका है।

मैं सोच-सोच रह जाता हू

मै सोच सोच रह जाता हू

आदर्श जगाता बार-बार
अभिलाषा कुछ करती विचार।
मै, किंतु परिस्थिति के प्रवाह मे
अनायास बह जाता हू।

मै सोच-सोच रह जाता हू।

इन प्रस्तुत पथ अवरोधो से
भिड जाऊ सोचा करता हू।
अपनी ही किन्तु विवशता पर
मै हृदय खरोचा करता हू।
उठता तो हू पर बालू की
दीवाल तुल्य ढह जाता हू।

मैं सोच-सोच रह जाता हू।

हो मुझमे वह विश्वास अटल,
हो मुझमे वह सकल्प सबल,
जीवन मे उसको ढाल सकू
जो कभी-कभी कह जाता हू ।
मै सोच-सोच रह जाता हू ।

सोचता हूं आज यह संसार क्या है, सार क्या ह

कल्पनाओ के क्षितिज को
चूमती आती उमगें,
कामनाओ पर थिरकती
झूमती आती उमगें,

वह उमगें प्राप्त हैं जिनको
कि यौवन का निमत्रण,
बाट जिनकी जोहता
वयसधि का उन्मत्त मधुवन,

सोचता हू इन उमगो का क्षणिक आधार क्या है,
सोचता हू आज यह ससार क्या है, सार क्या है ?

विश्व की जीवन डगर मे
आ मिले अनजान पथी,

आज का यह मिलन
भावी विरह का आह्वान करता,

मधु मिलन के मधु क्षणो मे
गा उठे कल गान पथी,

यह मिलन सुख उस विरह में
वेदना के प्राण भरता,

यदि न हो यह मिलन तो फिर विरह का आधार क्या है,
सोचता हू प्रेम का ससार क्या है, सार क्या है ?

किस विगत सयोग के
यह स्वप्न से छाये नयन मे,
आज वर्षा के सजल घन
क्यों उमड आये नयन मे,

आज किसके दर्शनो को
प्यास मे आखें तरसतीं,
और किसकी याद मे ये
आज बिरहिन बन बरसतीं,

वेदना का विपुल वैभव प्रेम का उपहार क्या है,
सोचता हू प्रेम का ससार क्या है, सार क्या है?

मृत्यु की वह क्षीण रेखा
प्राण की प्रस्तुत परिधि पर,
कर रही परलोक के
अस्तित्व का इगित निरन्तर,

लोग कहते है वहा
बिखरे पडे सुख, स्वर्ग, माया,
लोग कहते है वहीं
हैं दुख रौरव नर्क छाया,

सोचता हू मै कि जीवन क्षितिज के उस पार क्या है,
सोचता हू आज मै ससार क्या है, सार क्या है?

जिन्दगी सघर्ष ही का नाम है ?

जिन्दगी सघर्ष मे चलती रही,
जिन्दगी सघर्ष मे गलती रही,
किन्तु यह भी मानना होगा हमे
जिन्दगी सघर्ष मे ढलती रही।

जिन्दगी सघर्ष ही का नाम है,
जिन्दगी सघर्ष ही का धाम है,
हो हमे सघर्ष से भय किसलिए
जिन्दगी सघर्ष का परिणाम है।

जिन्दगी का मर्म है सघर्ष ही,
जिन्दगी का मर्म है सघर्ष ही,
जिन्दगी सघर्ष की पर्याय है,
जिन्दगी का धर्म है सघर्ष ही।

बोलती है जिन्दगी सघर्ष मे,
डोलती है जिन्दगी सघर्ष मे,
सुप्त सारी शक्तिया इन्सान की
खोलती है जिन्दगी सघर्ष मे।

मैं धरती की धूल हूं

मै धरती की धूल कभी खिल उठती बन कर फूल हू,
मै धरती की धूल कभी बन जाती शूल बबूल हू ।

मै धरती की धूल हू,
मैं धरती की धूल हू ।

माटी, गर्दा, धूल, रेणु, रज मेरे नाम अनेक हैं,
तुम्हें बताऊ अरे कहा तक मेरे काम अनेक हैं,
कभी राह पर बिछी, कभी मैं उडी वायु के यानो पर,
कभी हसी बन कर बिछ जाती फूलो की मुस्कानों पर ।
सागर की असीम गहराई मुझसे बची न खाली है,
पर्वत की ऊची चोटी भी मेरी देखी भाली है,
हरे भरे लहलहे खेत जो वसुधा पर मुस्काते हैं,
मेरी ही प्रभुता के वे भी गीत निरन्तर गाते हैं ।
मेरे ही तो वक्षस्थल मे खानों का भडार भरा,
मेरे ही तो कण-कण मे है देश-प्रेम का सार भरा,

मैं हू कथा स्वदेश भक्ति से भरे हुए बलिदानों की,
मेरे लिए तरसती आखें देश-प्रेम दीवानो की ।
मैं धरती की धूल सृजन के आदि अन्त का मूल हू,

मै धरती की धूल हू,
मै धरती की धूल हू ।

चरणो की रज हू फिर भी मस्तक पर धारी जाती हू,
दीपो की माला बनकर आरती उतारी जाती हू,
सिद्ध योगियों के शरीर मे कभी रमाई जाती हू,
भक्त जनो के भव्य भाल पर कभी लगायी जाती हू ।
चार जनो के कधो पर मै कभी उठाई जाती हू,
मृतकों के कुटुम्बियो द्वारा कभी जलायी जाती हू,
मरकर मेरी ही गोदी मे आता है यह विश्व महान,
माटी मे मिलकर बन जाती सारी दुनिया एक समान।
ऊचे–ऊचे महल कि जिनमे वैभव की क्रीडाए है,
झोपडिया जिनमे कि सिसकती मानव की पीडाए है,
दोनो के नयनो का काजल हू, आखो का पानी हू,
भत भविष्यत् की माता हू, वर्तमान की रानी हू ।
मै धरती की धूल, सृष्टि के दोनो तट की कूल हू,

मै धरती की धूल हू,
मै धरती की धूल हू ।

कभी कभी दुनिया वालो पर क्रोध मुझे जब आता है,
मेरा रोष बवडर बन कर अग जग पर छा जाता है,
तन में रवि का तेज समा कर अग्नि बाण बरसाती हू,
कभी कीच बनकर मानव को फिसलन मे रपटाती हूं ।

एक बूंद पानी को भी मैं कभी-कभी तरसाती
कभी हृदय की गहराई से शीतल नीर पिलाती हूं,
जिसे उमर खय्याम ढालता वह मस्ती का प्याला हूं,
जग के अधरो पर छलकाती मै अगूरी हाला हू।
सरस प्रेमियो के अधरो से सदा लगाई जाती हू,
मै इतनी महान हू फिर भी धूल कहाई जाती हू,
मेरी ही तो छाती पर इन सरिताओ की धारा है,
मेरे ही परिवर्तन मे तो जग का नाटक सारा है।
मै धरती की धूल, कभी अनुकूल, कभी प्रतिकूल हू,

मै धरती की धूल हू,
मै धरती की धूल हू।

बंदी पक्षी

मैं बचपन का बंदी पछी मुझे नहीं उडना आता है,
उडने की इच्छा होती है पर बेबस मन रह जाता है ।

हरे भरे पेडो के झुरमुट
झूम-झूम कर मुझे रिझाते
अरुण प्रभात स्वर्ण सध्या का
सुधा-स्नात सगीत सुनाते,

किरणो के इगित से मुझको निशि मे चाद बुला जाता है,
मै बचपन का बदी पछी मुझे नहीं उडना आता है ।

कभी थिरकती हुई हवाए
मेरा मन बहला देती हैं,
मेरी भावुक पीडाओ को
धीरे से सहला देती हैं,

इस पिजरे में जाने फिर भी क्यो मेरा मन घबडाता है,
मैं बचपन का बदी पछी मुझे नहीं उडना आता है ।

यों तो दुनियावाले मुझ पर
इतना प्यार किया करते हैं,
पीने को पानी खाने को
कुछ कण डाल दिया करते हैं,
पर अन्तर की भूख प्यास को कोई कहां मिटा पाता है,
मै बचपन का बदी पछी मुझे नहीं उडना आता है ।

ये मेरे शुभ चिंतक प्रतिदिन
आए आए आते जाते,
बडे नेह से, बडे प्रेम से
राम नाम का पाठ पढ़ाते;
भाव विहीन कठ मेरा भी उनके स्वर को दुहराता है,
मै बचपन का बदी पछी मुझे नहीं उडना आता है ।

मुझे प्रयोजन नहीं कि तुमने
मुझको कितना प्यार दिया है,
मै तो केवल यही जानता
तुमने मुझको बन्द किया है;
छूटे मन के मीत सभी, छूटा निज से भी नाता है,
मैं बचपन का बदी पछी मुझे नहीं उडना आता है ।

स्मृति

विगत मे जो सो रही थी
काल क्रम का डाल अचल,
दूर होना जा रहा था
दृष्टि से जो दृश्य प्रतिपल,
मै जिसे इतने दिनो पर
आज था कुछ भूल पाया,
आज धुधली पड चली थी
जिस विगत की क्षीण छाया,
आज कोकिल कूक कर
कह गयी बीती कहानी,
आज फिर तडपी हृदय की
वेदनाओ मे जवानी,

शांत उर मे फिर लगा उठने
वही भीषण बवडर,
अश्रुकण तुम भी चले आये
पुरानी याद लेकर।

वह गीत पुराने लगते है

अब तक जो कुछ गाये मैने
वह गीत पुराने लगते हैं।

लेखनी लकीरें खींच रही
कुछ लिखता कुछ लिख जाता हू,
अपनी ही इन रेखाओ को
मै स्वय नहीं पढ़ पाता हू,

मेरी ही भावुकता के क्षण
मुझसे कतराने लगते है।

अनजान क्षितिज की सीमा से
मन का आकाश घिरा सा है,
अनुभूति घटाओ से अन्तर
जैसे घुमडा-घुमडा सा है,

प्राणो की पीडा के बादल
क्यों नीर बहाने लगते हैं।

मिलने जुलने वाले कहते
कुछ बोलो चुप क्यों रहते हो,
खोये-खोये से रहकर यों
तुम किस धारा मे बहते हो,
उत्तर मे मन के घाव न जाने
क्यो हरियाने लगते हैं,
अब तक जो कुछ गाये मैंने
वह गीत पुराने लगते हैं।

अब समाज में आना होगा

अपनी ही सीमा से सीमित
जीवन अब न बिताना होगा,
अब समाज मे आना होगा।

आज जाचना होगा तुमको
अपने सभी विधान पुराने,
आज जाचना होगा तुमको
भूलें हुई कहा अनजाने,

परम्परा का दास न बनकर
नव युग को अपनाना होगा।

मानव की पीडाओ के प्रति
मानवता ही प्रथम धर्म है,

सस्कृति की सेवा ही सुख है
शाश्वत सुख का मूल मर्म है,

मानवता के नाते तुमको
मानव को अपनाना होगा।

आज विश्व के साथ तुम्हें भी
हसना होगा, रोना होगा,

सेवाओं के सुमन, विश्व की
माला मध्य पिरोना होगा,

वन्य कुसुम सा आज न तुमको
सूने मे मुरझाना होगा।

अब समाज में आना होगा।

कवि अपनी उलझन लिखता है

कवि अपनी उलझन लिखता है।

कवि की उलझन जग की उलझन, जग की उलझन कवि की उलझन,
उलझन के इस तारतम्य से कायम रहता जग का जीवन,
कवि जग का जीवन लिखता है,
कवि अपनी उलझन लिखता है।

कवि के प्राणो की पीडा मे जग की पीडाओ का कपन,
कवि के नैन किया करते है जग के आसू का अभिनन्दन,
जग के सजल नयन लिखता है,
कवि अपनी उलझन लिखता है।

कवि के अन्तर मे होती है जगती की अनुभूति तरगित
मानव के अन्तर्द्वन्दो का कवि की कविता करती इगित,
कवि मानस का मन लिखता है,
कवि अपनी उलझन लिखता है।

कवि जीवन को जबकि प्रकृति ने विषम परिस्थिति में डाला,
स्वास डोर से उर-मथन कर अनुभव का नवनीत निकाला,

कवि मानस-मथन लिखता है,
कवि अपनी उलझन लिखता है।

कवि अपनी वाणी से मन की कलिका खोल दिया करता है,
जडता मे जीवन, जीवन मे यौवन घोल दिया करता है,

प्राणो का मधुबन लिखता है,
कवि अपनी उलझन लिखता है।

गा कवि मगल का उपचार

विश्व ध्वस मे कूद पडा है,
गा कवि मगल का उपचार ।

आज सवार रहा हू माता
फिर टूटी वीणा के तार,
क्या सुस्पष्ट सुव्यक्त कर सकूगा
अपने कुछ मर्मोद्गार ।

मां बिखेर दे इस अनुचर पर
अपना मगल आशीर्वाद,
कर दे फिर उन्मत्त मुझे
भर दे मुझमे फिर काव्योन्माद ।

एक बार इस टूटी वीणा से
कर दू ऐसी झकार,
एक बार फिर सिहर उठे,
फिर गूज उठे सारा ससार ।

मची हुई है आज विश्व मे
फिर विनाशकारी हलचल,
काप रहा है कब से देखो
नभवर्ती तारामण्डल ।

वसुधरा पर आज शारदे
फैल रहा है अत्याचार,
रज कण भी हा सिसक रहे हैं
रुदन कर रहा है ससार।

किस अदृश्य के अन्तस्तल मे
आज कर रही हो विश्राम,
अखिल विश्व के युद्धवाद से
रहा न क्या तुमको कुछ काम।

पग-पग पर मग मे ठग अपना
मोहक जाल बिछाए हैं,
बधिक व्याध से प्रतिपल
पक्षी-दल पर ताक लगाये हैं।

नहीं सहायक, मित्र न कोई
नहीं कोई आधार यहां,
मुख्यतया सबका ही है
विश्वासघात व्यापार यहा।

आकर्षक सकेतो पर से
बरस रहा है प्यार यहां,
अन्तरग मे किन्तु छिपे हैं
कांते छुरे कटार यहां।

दीन दुखी दुर्बल देशो की
जनता के शासन की डोर,
निर्दय सबल शक्तिया
कर मे लेकर आज रहीं झकझोर।
आज घुट रही है मानवता
मा यह कैसा कष्ट अनत,
हुआ न इन सत्ताधीशो के
निर्दय आश्वासन का अन्त।
मा तुम मौन देखती हो
बलवानो का विषमय व्यापार,
शाति शांति कहते कहते
बरसा देता जग अत्याचार।
मां न करोगी विश्व महा-
रथियो को क्या सद्बुद्धि प्रदान,
क्या न हरोगी व्यथा विश्व की
हे करुणामयि दयानिधान।
मानवता पर आज चल रही
यह कैसी मीठी तलवार,
विश्व ध्वस मे कूद पडा है
गा कवि मगल का उपचार।

विश्व मे नव जागरण हो

प्राच्य क्षिति फिर आज
स्वर्णिम रश्मियो से जगमगाए,
अशुमाली, स्वर्ण युग का
आज नव सन्देश लाए,

नव कमल दल हो प्रफुल्लित,
दूर तम का आवरण हो।
विश्व मे नव जागरण हो।

उस विमल आलोक में
ससार को ससार जाने,
प्राणियो के प्रति मनुज
करना सरल व्यवहार जाने,

मानवोचित सद्गुणों का
सक्रिय एकत्रीकरण हों।

विश्व में नव जागरण हो।
विश्व में नव जागरण हो।

क्या सचमुच इन्सान यही है ?

क्या सचमुच इन्सान यही हैं ?

किए गर्व से ऊंचा मस्तक
ये दुनिया को नीच समझते,
ये अपने को कमल और
सारी दुनिया को कीच समझते;
सर्वश्रेष्ठ प्राणी पृथ्वी पर वसुधा के वरदान यही हैं;
क्या सचमुच इन्सान यही हैं ?

तुम सबके ईमान मिटा दो
इन सबका ईमान बताता,
तुम सबके भगवान मिटा दो
इन सबका भगवान बताता,
हिंसा चोरी बलात्कार क्या इनके कार्य महान यही हैं;
क्या सचमुच इन्सान यही हैं ?

ईश्वर अल्ला धर्म और
मजहब का नाम लिया करते हैं,
इसी नाम पर इन्सानो की
गरदन काट दिया करते हैं,
इनके धर्म और मजहब के परम पवित्र विधान यही हैं;
क्या सचमुच इन्सान यही हैं ?

मजहब की भोली सूरत मे
कितने काले हृदय छिपे है,
मन्दिर मस्जिद के पीछे
मद से मतवाले हृदय छिपे हैं,
इन्सानी दुश्मन है ये, इन्सानी शैतान यही हैं,
क्या सचमुच इन्सान यही हैं ?

लिखने का पेशा करता हूँ

लिखने का पेशा करता हू ।

जीवन संघर्षों की जब-जब
अनुभूति हृदय छू जाती है,
अन्तर वीणा के तारो मे
कितने कम्पन भर जाती है,

हर कम्पन से हर सिहरन से
मुखरित हो जाते गीत नये,
स्मृति-पट पर अंकित होते
कुछ व्याकुल मदिर अतीत नये,

जो भूल न करने की उस दिन
मैंने सौगन्ध उठाई थी,
आने वाले उन्मादो मे
वह भूल हमेशा करता हू ।

लिखने का पेशा करता हू ।

मैंने रेखाए खींची गर
तस्वीर तुम्हारी ही तो है,
सारी पीडा ही हुई अरे,
बेपीर तुम्हारी ही तो है,

मन की विह्वलता मे मैंने
कुछ गीत लिखे तो हैं, लेकिन
मेरे इन सारे गीतो की
जागीर तुम्हारी ही तो हैं,

घटनायें प्रिय हो या अप्रिय
सबसे निबाह कर लेता हू,
कल क्या होगा इसका कुछ भी
मैं नहीं अन्देशा करता हू।

लिखने का पेशा करता हू।

उस कला का क्या करूँ मैं

उस कला का क्या करू मैं ।

जिस कला से विश्व का
कल्याण कुछ भी हो न पाया
जिस कला से दुखित जीवन
दुख अपना खो न पाया,
जो कला केवल कला के
हेतु ही जीवित रही हो,
जो प्रगति पथ रोकती उस शृंखला का क्या करू मै,
उस कला का क्या करू मै।

जो चमक कर छीन लेती
विश्व का व्यापक उजाला,
गर्भ में जिसको छिपाये
हो अमगल मेघमाला,

वक्र आभा बादलों में ही
सदा घिरती रही जो,
और निकली भी कभी जो
गाज बन गिरती रही जो,
उस चमकती हुई चपला चपला को क्या कहूं मैं,
उस कला का क्या कहूं मैं ।

आज प्रलय के गान लिखो

आज प्रलय के गान लिखो।

क्योंकि प्रलय के गीतो में है
छिपा हुआ निर्माण विश्व का
क्योंकि प्रलय के गीतो मे है
छिपा हुआ प्रिय प्राण विश्व का,

गीतो की प्रलयकर प्रतिध्वनि
पर नूतन निर्माण लिखो।
आज प्रलय के गान लिखो।

आज पतन के महागर्त मे
खडी सिसकती है मानवता,
और विश्व के महामच पर
तांडव करती है दानवता,

जो जीवन में क्रांति मचा दे
वह अभिनव उत्थान लिखो।
आज प्रलय के गान लिखो।

उन्नतिमय मानव के पथ पर
आज गहन तम का आच्छादन,
आज विवशता मे जकड़ा सा
सिसक रहा बुझता सा यौवन,

गति-अवरुद्ध हो रहा मानव
पावन प्रगति प्रयाण लिखो।
आज प्रलय के गान लिखो।

कवि अपने गीत सुनाता चल

कवि वीणा मधुर बजाता चल,
कवि अपने गीत सुनाता चल।

वह गीत कि जिससे जगती के
जीवनमय सुन्दर चित्र बनें,
वह गीत कि जिससे मानव के
कुत्सित परिणाम पवित्र बनें,

कवि जग की जटिल समस्या को
निज वाणी से सुलझाता चल।

वह वाणी क्या जो मानव को
निद्रा से अरे, जगा न सकी,
जो भ्रम के गह्वर से निकाल
शुचि सुन्दर पथ पर ला न सकी,

कवि अन्धकारमय मानव के
पथ पर प्रकाश दिखलाता चल।

जीवन का सार तभी है जब
प्राणो की बाजी खेली हो,
आनन्द तभी है छाया का
जब कठिन धूप भी झेली हो,

लू की लपटें पथ पर आयें
तो उनको भी लिपटाता चल।

अन्तर मे हाहाकार मचा
तो नीरस हैं वैभव मधुमय,
उपभोगो का आनन्द तभी
जब होता है कुछ शान्त हृदय,

कवि जग की जलती ज्वाला पर
तू शांति सुधा बरसाता चल।

दुख से सुख को, तम से प्रकाश को
होने का अधिकार हुआ,
बधन ही के द्वारा जग मे
स्वातत्र्य भाव साकार हुआ,

कांटो के पथ पर निर्भय होकर
हसता चल, मुस्काता चल।

दुनिया को गुणी बनाना है
तो आप स्वयं गुणवान बनो,
कर्तव्य सिखाने से पहले
क्रमश कर्तव्य निधान बनो,

आदर्श विश्व बन जायेगा
अपना आदर्श बनाता चल,
कवि वीणा मधुर बजाता चल,
कवि अपने गान सुनाता चल।

मैं दिन भर गाता रहता हू

मै दिन भर गाता रहता हू,
मै श्वासो के दो चरण पथ पर सदा बढाता रहता हू।

कब मैने पथ पर पाव धरा
इतना तो मुझको ज्ञात नही,
पर चलता रहा निरन्तर हू
यह भी मुझसे अज्ञात नहीं,
मैं मजिल तक कब पहुचूगा
यह भी कैसे कह सकता हू,

गतिशील चरण को सदा प्रगति के गीत सुनाता रहता हू,
मैं श्वासों के दो चरण पथ पर सदा बढाता रहता हू।

आकर्षण की यह दुनिया है
सर्वत्र नया उल्लास यहा,
प्रत्येक शूल ही पग-पग पर
खिल उठता बन मधुमास यहा,
शूलो को फूल समझने की
है भूल मुझे स्वीकार नहीं,

शूलो को शूल समझता हू फिर भी अपनाता रहता हू।
मै दिन भर गाता रहता हू।

पहले हम इंसान बनें

वह जीवन क्या जो जीवन मे
कुछ काम किसी के आ न सका,
वह हृदय अरे वह हृदय नही
जो दुखियो को अपना न सका।
वह मानव ही क्या अपना ही
बस पेट पालना जान सका,
जो मानव मानव की पीडा
को भी न कभी पहचान सका।
जो केवल अपने हेतु जिया
उसका जीवन ही व्यर्थ रहा,
मानव मे मानवता न हुई
तो मानव का क्या अर्थ रहा।
यदि द्वेष दभ कुटिलाई ही
इस जीवन का व्यापार रहे,

यदि छल प्रपंच ईर्ष्यालु वृत्ति
इस जीवन का आधार रहे,
दुखियों पर दिल में दया न हो
कर्तव्यों से अनुराग न हो,
यदि हृदय कुसुम में सरल वृत्ति का
पावन पुण्य पराग न हो,
तो सच समझो जग दिखलावे में
सचमुच कोई सार नहीं,
इन कोरी जय-जयकारों से
हो पावेगा उद्धार नहीं।
दुनिया को दिखलावा करके
तुम चाहे सुयश कमा भी लो,
प्रत्यक्ष रूप से स्वांग सजा कर
चाहे धाक जमा भी लो।
ये दुनिया समझे भले तुम्हें ही
तुम धर्मवान हो पुण्यवान,
कल्याण तुम्हारा कर देगा क्या
दुनिया का यह भ्रमित ज्ञान।
तुम अपने अन्तर से पूछो
तुम सुनो आत्मा की पुकार,
अपनी कृतियों पर सुनो बन्धु
तुम केवल अपने ही विचार।
देखो कि हृदय क्या कहता है
यदि हृदय कहे यह उचित कर्म,

तो वही तुम्हारे लिए बन्धु
है परम धर्म, सर्वोच्च कर्म।

तुम चले देवता कहलाने,
पर मानव भी कहला न सके,
तुम चले विश्व विजयी बनने
पर विजय स्वय पर पा न सके।

तुम यही चाहते जल्दी से
हम किसी तरह भगवान बनें,
पर नहीं चाहते हो उससे
पहले हम इन्सान बने।

तुम मानवता को अपनाओ
देवत्व तुम्हें अपनाएगा,
तुम बनो आत्म-विजयी मानव
जग स्वय विजित हो जायेगा।

बस अपना कार्य किये जाओ

तुम बाह्य प्रदर्शन को तज कर
बस अपना कार्य किये जाओ।
यद्यपि मानव पथ भूला है
पर कोई भी गतिहीन नहीं,
सब मे है बुद्धि समझने की
जग मे कोई गतिहीन नहीं।

बस उदाहरण बनकर जग को
अपना आदर्श दिये जाओ,
तुम बाह्य प्रदर्शन को तज कर
बस अपना कार्य किये जाओ।

सब दौड़ रहे अपने पथ पर
अपने जीवन का भार लिए,
तू भी चलता चल निज पथ पर
अपने उर के उद्गार लिए।

जो पथ पर साथी बन पायें
उनको भी साथ लिये जाओ,
तुम बाह्य प्रदर्शन को तजकर
बस अपना कार्य किये जाओ।

बातों का अवसर मत चाहो
पर अवसर पर मत मौन रहो,
इस कोलाहलमय महा सिन्धु मे
सक्रिय प्रबल पतवार गहो ।

तुम पुष्ट भावनाओं का रस
प्रियवर चुपचाप पिये जाओ,
तुम वाह्य प्रदर्शन को तजकर
बस अपना कार्य किये जाओ।

जब अवसर आयेगा जग मे
तब गूंज उठेगा तेरा स्वर,
उस समय हो उठेंगे मानव के
मूक हृदय स्वयमेव मुखर ।

जग पर न्योछावर होने को
मानव चुपचाप जिये जाओ,
तुम वाह्य प्रदर्शन को तजकर
बस अपना कार्य किये जाओ।

उपकार करके भूल जाओ

है तुम्हें यदि चाह सुख की
तो किसी को मत सताओ,
सत्य पथ पर निष्कपटता
से चरण अपने बढ़ाओ।
जीव जितने जगत मे
हो न वैर विरोध उनसे,
कर्म के प्रेरे सभी है
मत करो तुम क्रोध उनसे।
शील के पीयूष से
विष वासना का दूर कर लो,
और जीवन मे सरस सयम
सुखद सतोष भर लो।
व्यर्थ सग्रह, व्यर्थ व्यय की
वृत्तिया अपनी हटाओ,

विश्व की सम्पत्ति मानव
विश्व सेवा मे लगाओ।
शक्तिमय ओ! निर्बलों को
तुम अभय जाकर बनाओ,
बंधुता का भाव है तो
बंधुता के काम लाओ।
ज्ञान है तो विश्व के
अज्ञान का परदा हटाओ,
सत्य सेवा है यही
उपकार करके भूल जाओ।

दक्ष रहो

तुम समस्त अप्रिय प्रसग के
अपनाने को दक्ष रहो।

कोई भी घटना जो जग के
किसी जीव पर बीत चुकी है,
वह तुम पर भी आ सकती है।

जीवन रण के सैनिक
सघर्षों के सदा समक्ष रहो,
तुम समस्त अप्रिय प्रसग के
अपनाने को दक्ष रहो।

वह जिनका जीवन विलासमय
उपकरणो से आच्छादित है,
उन्हें सुखी मत समझो, उनका
सुख तो पग-पग पर बाधित है,
पत्ती उन्हें हिला सकती है।

उनकी सुख सध्या के पीछे
छिपी हुई है रजनी काली,
हल्की एक हवा की थपकी
केवल रुई उडाने वाली
उनका दीप बुझा सकती है।

तुम्हें अगर दृढ़ बनना है तो
मत उनके समकक्ष रहो,
तुम समस्त अप्रिय प्रसग के
अपनाने मे दक्ष रहो।

निर्बलते तू है पाप रूप

निर्बलते तू है पाप रूप!

निर्बल मानव है वसुधा पर
असहाय पुंज अरमानों का,
उसके प्राणों की आहुतियां
बहलाती मन बलवानों का,

उसके शोणित के सिंचन से
वसुधा को जो उपहार मिला,
उनपर भी केवल एकमात्र
बलवानों को अधिकार मिला,

निर्बल मानव का सारा श्रम
उसको केवल संताप रूप।
निर्बलते तू है पाप रूप।

जो अधिकारों पर लड़ न सका,
जो अधिकारों पर मर न सका,
जो अधिकारो की प्राप्ति हेतु
सब कुछ न्योछावर कर न सका,

इतिहास विश्व का है साक्षी
है उसको कब अधिकार मिला,
टुकड़े मिल गये दया के, पर
कब भीख मांग कर प्यार मिला,

वरदानो की इस दुनिया मे
निर्बलते तू अभिशाप रूप।
निर्बलते तू है पाप रूप।

मत दीन बनो

मानव होकर मत दीन बनो।

तुम मानव हो, जिस मानव ने
स्वर्गों के सुख ठुकराये हैं,
तृण तुल्य तिरस्कृत कर जिसने
वैभव अरमान लुटाये हैं,
जिस मानव ने मानवता का
गौरव सम्मान बढ़ाया है,
जिसके आगे बलवान प्रकृति ने
अपना शीश झुकाया है,

तुम क्षणिक परीक्षा के प्रसग पर
मत कर्तव्यविहीन बनो।
मानव होकर मत दीन बनो।

जिसको पुराण ने गाया है
वह गौरव गान तुम्हारा है,
जिसमे जगदीश समाया है
वह वेश महान तुम्हारा है,
मर्यादा पुरुषोत्तम का पद
मानव तुमने ही धारा है,
तुमने नर मे नारायण का
सुन्दर श्रृंगार सवारा है,

तुम बनो आत्मविजयी मानव,
मत इच्छा के आधीन बनो।
मानव होकर मत दीन बनो।

तुम मानव हो सकट मे भी
जौहर जिसने दिखलाये हैं,
जिसने अपने उर पर हसते
हसते अगार सजाये हैं,
रख धैर्य हृदय को साहस दो
दुख के बादल टल जायेंगे,
यदि आज बुरे दिन आये हैं
तो कल अच्छे दिन आयेंगे,

आपत्ति काल मे आकुल होकर,
तुम मत आभाहीन बनो।
मानव होकर मत दीन बनो।

जीवन की विषम विषमता मे
जिस मानव का उत्कर्ष छिपा,

जिसकी महानता का जग की
निष्ठुरता मे निष्कर्ष छिपा,
संघर्षों के सम्मुख सदैव
वह अपना सीना तान चला,
तुम हो वह जो सदा कुचलता
काटो का अभिमान चला,

तुम औरो के अनुचर न बनो,
याचक न बनो, स्वाधीन बनो।
मानव होकर मत दीन बनो।

मतवाले न बनो

दो दिन की झूठी चहल-पहल मे
मानव मतवाले न बनो।

जिनके डसने पर मत्र नही
उन व्यालो से मत खेल अरे,
तृष्णा ज्वाला मे अपने को
स्वयमेव न आज ढकेल अरे,

उज्जवल भविष्य के प्रिय पथ पर
गडने वाले भाले न बनो।

क्षणभगुर वायु झकोरो पर
इठला-इठला कर झूल न यो,
अपने मन की रगीनी पर
रे फूल व्यर्थ ही फूल न यो,

उद्देश्यहीन जो कर मिट्टी मे
मिल जाने वाले न बनो।

इन मायामयी खिलौनो से
तुम शांति तनिक भी पा न सके,
फिर भी परत्व का मोह त्याग
तुम अपने को अपना न सके,

पददलित भाग्य पर फूट-फूट
रोने वाले छाले न बनो।
दो दिन की झूठी चहल-पहल मे
मानव मतवाले न बनो।

भयभीत न बन

यदि तेरे सर पर सकट के
घनघोर सघन घन छाये हो,
जीवन पथ के सगी साथी
अपने भी बने पराये हो,
तब ओ प्रबुद्ध निज पौरुष का
अवलम्ब ग्रहण करने वाले,
औ प्रलय प्रभजन के सम्मुख
निश्चल होकर लडने वाले,
ओ नर निर्भयता के निकेत,
तू नगपति बन, नवनीत न बन,
मानव भय से भयभीत न बन।
पुरजन, प्रियजन, प्रिय मित्रो की
सकट ही कठिन परीक्षा है,
उन्नति के पथ पर बढ़ने की
सकट ही दैवी दीक्षा है,

यद्यपि सकट से जग डरता

डरने से सकट टल न सका,

सकट मे रोते रहने से

कुछ काम किसी का चल न सका

बन पौरुषमय उज्ज्वल भविष्य,

पछताता हुआ अतीत न बन,

मानव भय मे भयभीत न बन।

यह नगर ग्राम, यह सुख सम्पति

सब मानव का सचित श्रम है,

प्राकृतिक शक्तियो का नेता

मानव का प्रखर परिश्रम है,

सकट के प्रबल प्रहारो पर

बन जा साहस की ढाल प्रबल,

तेरे ही प्रखर पराक्रम से

मचती तूफानो मे हलचल,

मानव दो क्षण की हार न बन,

मानव दो क्षण की जीत न बन,

मानव भय मे भयभीत न बन।

मै पतित नहीं हूँ

मै पतित नहीं हू जब तक मै उत्थान नही भूला हू।

माना कि मलय मारुति छू कर कर देता सज्ञाहीन मुझे,
माना कि मोह लेते आकर आकर्षण नित्य नवीन मुझे,

पर उनकी क्षणभगुरता की पहचान नहीं भूला हू,
मै पतित नहीं हू जब तक मै उत्थान नही भूला हू।

अलसित निशीथ भरती आती नयनो मे एक उनींदापन,
लेकर सुषुप्ति की मधुशाला यह ज्योत्स्ना करती आलिगन,

निद्रा निमग्न हू पर मै स्वर्ण विहान नहीं भूला हू,
मैं पतित नहीं हू जब तक मै उत्थान नहीं भूला हू।

मै नियति व्यूह मे भ्रमित किन्तु मैं नियति चक्र का यत्र नहीं,
मैं घिरा परिस्थितियो से हू, पर मैं कदापि परतत्र नहीं,

जब तक स्वतन्त्र होने का मै वरदान नहीं भूला हूं,
मैं पतित नहीं हू जब तक मै उत्थान नहीं भूला हूं।

वैभव के मधुमय उपादान दे सके न मुझको कभी लोभ,
यद्यपि यह अस्थिरता मन की दे जाती क्षण भर मुझे क्षोभ,

पर कभी अयाचक होने का अभिमान नहीं भूला हू,
मैं पतित नहीं हू जब तक मै उत्थान नहीं भूला हू।

दो दिन का मेहमान हूं

तेरी इस नगरी मे बाबा दो दिन का मेहमान हू ।

विविध पथो के आकर्षण से जब मेरी मति टकराती है
तब मेरे ही पथ की ठोकर मुझको राह बता जाती है,
मै अपनी त्रुटियो से ऊपर हू, ऐसा विश्वास न करना
पर मेरे असफल सघर्षों का मानव उपहास न करना,
मै भी इस धरती पर रहने वाला एक इसान हू,
तेरी इस नगरी मे बाबा दो दिन का मेहमान हू ।

पुष्प और पाषाण कणों से बना हुआ है मेरा यह तन,
सुख दुख शान्ति व्यथा के मिश्रण से जीवित है मेरा जीवन,
मेरे गीतो मे पीडाए पीडाओ मे गान छिपे हैं,
मेरी सांसो की आहट मे प्रलय और निर्माण छिपे है,
समय सिधु पर चलने वाला अजर अमर जलयान हू,
तेरी इस नगरी मे बाबा दो दिन का मेहमान हू ।

कभी विश्व की पीडाओ से क्रीडा करने मे सुख पाता,
कभी शांति की एक झलक पर पीडा का ससार लुटाता,
कभी चाहता हू पृथ्वी पर सुखद स्वर्ग साकार सजा दू,
कभी चाहता हू वसुधा के वक्षस्थल पर आग लगा दू,
जीवन तत्री के तारो पर उलझा-सुलझा गान हू,
तेरी इस नगरी मे बाबा दो दिन का मेहमान हू ।

जन्मांध

भाई यह जग कैसा है ?

तुम कहते सावन आया,
मै समझा जिसने आकर
जग मे पानी बरसाया,
तुम कहते बादल आये,

मै क्या जानू वह क्या है ?
भाई, यह जग कैसा है ?

"कोयल की कूक सुनी ?"
"हा !"
"भ्रमरो के गाने ?"
"हा ! हा !"

यह विकसित कुसमित कलिया,
कलियो पर मधुपावलिया,

मुझको इनका न पता है,
भाई यह जग कैसा है ?

बच्चों की मीठी बोली
हां, कभी-कभी सुन लेता,
पर देख नहीं पाता मैं
उनकी छवि भोली-भोली,

यह सोच हृदय दुखता है,
भाई यह जग कैसा है !

ये सूरज चांद सितारे
भाई वे क्या है सारे,
वे नित्य गगन मे आते,
हम उन्हें नहीं छू पाते,

क्या सचमुच ही ऐसा है ?
भाई यह जग कैसा है ?

दोनो मनुष्य है--दोनो रहस्य हैं

फूलो के हार मे-फूलो के प्यार मे,
कोई मुरझा गया-कोई मुरझा गया,

काटो की सेज पर-काटो की राह पर
कोई मुस्का गया-कोई मुस्का गया,
दोनो मनुष्य हैं, दोनो रहस्य है।

प्यार मे दुलारा गया-नाजो मे पाला गया,
फिर भी न पल सका-फिर भी न पल सका,
पीडा मे तपाया गया-आग मे जलाया गया,
फिर भी न जल सका-फिर भी न जल सका,
दोनो मनुष्य हैं-दोनो रहस्य है।

भावना पत्थर नही है

मूर्ति है पाषाण की,
पर भावना पत्थर नही है,
क्या मिलेगा फल उसे,
जिसमे हृदय का स्वर नही है।
जग कहे पर हम न असफल को
पराजित मान सकते,
जो न साहस हारता हो,
वीर, है कायर नहीं है।
भावनाए नित्य नूतन,
बधनो का जाल बुनती,
निर्जरा का लाभ ही क्या
यदि हुआ सवर नहीं है।
ज्ञात हमको हो न हो
यह तो स्वय अपनी कमी है,

प्रश्न कोई भी नहीं,
जिसका कोई उत्तर नहीं है।
कोठिया पर कोठिया
बनती रहें इतनी हविश है,
किन्तु कहते है कि यह,
दुनिया किसी का घर नहीं है।

धोखा दिया है

कई बार मैने सुनी यह शिकायत,
मुझे मेरे प्यारो ने धोखा दिया है,
मैं जिनका सहारा सदा सोचता था,
मुझे उन सहारो ने धोखा दिया है ।
अगर हम यह सोचें हमारी ही करनी
हमे मिल रही है किसी के बहाने,
तो यह सत्य है अपने जीवन मे हमको
पडें आख से यो न आसू बहाने।

हमारी मधु कल्पना को सदा ही,
हमारे विचारो ने धोखा दिया है,
जो सच पूछिये तो यह कहना वृथा है,
मुझे मेरे प्यारो ने धोखा दिया है ।
मुदित गीत गाती हुई सौम्य सरिता,
जो कल तक ठुमकती चली जा रही थी,
वही आज प्रलयकारी बाढ बन कर,
कुपित सिधु जैसा सितम ढा रही थी,

कहा मैंने यह क्या, तो उत्तर मे बोली,
मुझे इन कगारो ने धोखा दिया है,
मै जिनका सहारा सदा सोचती थी,
मुझे उन सहारो ने धोखा दिया है।
चमन चहचहाता हुआ था यह उस दिन,
यहा सैर करती थी सुन्दर तितलिया,
मधुप गुनगुनाते हुए घूमते थे,
था करता समीरण यहा रगरेलिया,

खिले फूल झुक झूम कर नाचते थे,
सुनाते थे सौरभ के मादक तराने,
प्रकृति अपनी रगीन सुषमा बिखेरे
चली हर पथिक के हृदय को रिझाने,
मगर आज क्या देखता हू, चमन मे
कि चहु ओर पतझाड़ छाया हुआ है,
जो पूछा कि यह क्या तो उत्तर मे बोला,
मुझे इन बहारो ने धोखा दिया है।

रो रोकर भी गाओगे तुम

मै हू ऐसा राग कि जिसको,
रो रो कर भी गाओगे तुम ।

जाने कब सहेज दी मुझको
शैशव ने यौवन की थाती,
आशाओ का दीप जल उठा,
जिस दीपक मे तेल न बाती,

आज विगत पट के घूघट से
झाक रही सुधियो की बाला,
मेरे स्वर पर गूज उठी रे
यह किसके गीतो की माला,

मै हू ऐसी याद कि जिसको
बार बार दुहराओगे तुम,

मैं हू ऐसा गीत कि जिसको
रो रो कर भी गाओगे तुम।

कहीं घनों की बाट जोहता
बैठा होगा एक बिछोही,
रीते मेघ लौटते हैं क्यो ?
भूल गया क्या वह निर्मोही,

विरहिन यामा की आखों ने
धुंधले-धुधले दिवस बिताए,
नभ की हसती रातो ने
आसू के मोती ढुलकाए।

प्रियतम इनको किरन करो से
कभी समेट न पाओगे तुम,
मै हू ऐसा गीत कि जिसको
रो रो कर भी गाओगे तुम।

प्रकृति मे बसंती छटा छा रही है

हरित भूमि ने पीत परिधान पाया।
नवल हास ले मजु मधुमास आया,
बनो मे, नगर के सरस उपवनो मे,
जनो के मनो मे, भवन आगनो मे,

विमल व्योम पथ से किरण के सहारे,
मधुरिमा उतरती चली आ रही है।

बिछी भूमि पर स्वर्ण की मुद्रिकाए
कि हैं नील नभ में जडी तारिकाए,
त्रिविध मोद धारे विविध वर्णवाली
लिए दुदुभी दीपती हैं दिशाए

अनेको उमगें हृदय मे छिपाये,
कली मदभरी मद मुस्का रही है।

बसंत बहार

सुरभि से सुमन की भरी झोलियां हैं,
मधुर गीत गाती मधुप टोलियां हैं,
लचकती हुई डालियां झूमती हैं,
पुलक मेदिनी के चरण चूमती हैं,

लता पुष्प मंडित विमल वीथियो मे,
सुरभि से सनी वायु इठला रही है।

सरो मे कहीं तैरती मीनमाला
तरंगित कहीं जलमयी नृत्यशाला,
कहीं आम्र पर कूकती कोकिलाए
कहीं तरुवरो से हैं लिपटी लताए,

मुदित मन मयूरी कहीं पंख खोले,
थिरकती हुई नृत्य दिखला रही है,

प्रकृति मे बसंती छटा छा रही है।

चंद्रलोक मे

मधुमयी निशा की गोदी मे
जब शात पडा जग सोता था,
कोई सुषुप्ति मे चुपके से
तब सुन्दर दृश्य सजोता था।

मेरें सुषुप्ति मे भी उसने
तब जीवन की मदिरा घोली,
मैने भी दिव्य दृष्टि पायी
मैंने भी अहा आख खोली।

मेरे भी चारो ओर रम्य
दृश्यावलियों का मेला था,
उन सब मे मैं तब विचार रहा
सानन्द स्वतत्र अकेला था।

मैंने थी दिव्य शक्ति पायी
मैं चन्द्रलोक की ओर चला,
मैंने सोचा, मेरी समानता
कर सकता है कौन भला।

मैंने समीर को साथ लिया
उसने मेरी आज्ञा मानी,
उल्लास भरा करता था मै
मनमानी सैर वायुयानी।

चमचम प्रकाश मे शुभ्र हिमालय
चांदी सा था चमक रहा,
लगता था चटक चादनी मे
कैसा सुन्दर ससार अहा।

उत्ताल तरगें सागर की
थी उछल रहीं पृथ्वी तल पर,
चांदी की किरणें थिरक रही थीं
वसुधा के वक्षस्थल पर।

वन-खड बस्तिया नाच-नाच कर
थी पताल मे पैठ रहीं,
धुधली-धुधली सी दिखती थीं
पर्वतमालाए कहीं-कहीं।

फिर यह भी दृश्य अदृश्य हुआ
कुछ नहीं दिखाई देता था,
सागर का कल-कल क्षीण नाद
बस मुझे सुनायी देता था।

बादल मुझको छूते जाते
मैं भी उन पर मडराता था,
मै कभी मेघमालाओं की
कदराओ मे छिप जाता था।

था चन्द्र लोक कुछ दूर नहीं
वह आया और निकट आया,
मेरी आखें मुद गयीं देखकर
ज्योतिर्मय अद्भुत माया॥

फिर उस महान आलोक-लोक मे
मै जब आख खोल पाया,
तो हरा भरा उद्यान एक
अति सुन्दर सा सम्मुख आया।

आश्चर्य चकित होकर मैने
जब उसमे पाव बढाये थे,
तत्क्षण ही सुन्दर देवदूत
मेरे स्वागत को आये थे।

उस चन्द्रलोक के उपवन में
वे सादर सैर कराते थे,
नाना प्रकार के दृश्य दिखा कर
मेरा जी बहलाते थे।

था स्वच्छ सरोवर एक बना।
कुछ परियां उसमे तैर रहीं,
कुछ सुमन क्यारियों मे इठलातीं
इधर उधर कर सैर रहीं।

थी छम-छम की झकार कहीं
थे साज-बाज सामान कहीं,
कोकिल के सुन्दर गान कहीं
मुरली की मीठी तान कहीं।

उपवन के बीचोबीच वहा
फिर सुन्दर ताजमहल देखा
चुपचाप शांत बैरागी सा
उसका वह रूप धवल देखा।

आकर्षित सा, मन्त्रित सा मैं
उस ताजमहल में चला गया,
दिखलायी दिया वहा मुझको
फिर एक अनूठा दृश्य नया।

है जहां समाधि युगल दम्पति की
वहीं एक सुन्दर बाला,
थी खड़ी हुई अपने हाथों मे
लिए मनोहर मणिमाला।

वह स्वर्ण सुन्दरी बाला थी
मदभरी छलकती हाला थी,
सौन्दर्य सुधा का प्याला थी
या मूर्तिमान मधुशाला थी।

वह गाल सु-लाल गुलाल से थे
वह रक्तिम केशर थाल से थे,
वे उदित युग्म रवि बाल से थे
या जड़े हुए दो लाल से थे।

मै देख रहा था उसे और
वह मुझे देख कर मुस्कायी।
मानो वह मुझसे परिचित हो
निर्भय इस भांति निकट आयी।

मैंने नैनो को बन्द किया,
कुछ उत्कंठा मिश्रित भय से,
कुछ रूप छटा की चकाचौंध,
कुछ कौतूहल कुछ विस्मय से।

क्या सचमुच उससे भी बढ़ कर
हूरें अथवा परियां होंगी,
उर्वशी मेनका तिलोत्तमा,
रति रम्भा अप्सरियां होंगी

कुछ नहीं कल्पना कोरी है
केवल मन को समझाना है,
इस चन्द्रलोक के वैभव का
जग ने रहस्य कब जाना है।

सुख का है स्वर्ण विहान यहां
है सुन्दरता की खान यहां,
जैसे त्रिभुवन का संचित है
अमृत अमरत्व महान यहां।

फिर जैसे ही उस रमणी ने
पहनायी मुझको मणिमाला,
हो गया भंग वह मधुर स्वप्न,
चुक गयी कल्पना की छाया।

कुटीर कल्पना

इस विशाल वसुधा पर मेरी सुन्दर सी प्रिय पर्ण कुटीर
बनी हुई है विश्व मोहिनी किसी शात सरिता के तीर,
लगी हुई हो पुष्प-वाटिका उस कुटिया के चारो ओर,
देख रम्य सौन्दर्य प्रकृति का हो जाऊ आनन्द-विभोर।

जब उदयाचल पर प्रभात-प्राची का होता मिलन महान,
जब तरु-वृन्तो पर पक्षीगण करते हैं मृदु मगल गान,
जब किरणें करने उठती है दिव्य दिवस का सुखद सृजन,
तब जग की कल्याण कामना रहे मनाता मेरा मन।

नवजीवन सन्देश सुना कर त्रिभुवन को कर ज्योतिर्मय,
मध्य व्योम का प्रणय प्राप्त कर चुम्बन करके क्षितिज उभय,
साध्य-गगन को स्वर्णदान दे रवि जब लेता हो विश्राम,
धन्यवादपूर्वक तब तुमको मै कृतज्ञ हो करू प्रणाम।

जब नभ पर क्रीडा करती है चारु चन्द्रिका की मुस्कान,
और कलाधर कर-किरणो से करता जग को अमृत दान;

उस सुखमयी मधुर बेला मे इष्ट मित्र स्वजनों के सग,
रहा करे अध्यात्मवाद का परम पवित्र प्रशस्त प्रसग।
मीठा सा मतवालापन जब नेत्रों मे भर कर ससार
कुछ चाहे सगीत सुधा का शीतल शांत सरस उपचार,
तो फिर अपनी वीणा लेकर मधुर-मधुर कुछ गाऊ मै,
जग को सुख से शयन कराकर शांति सुधा सरसाऊ मै।

घूघट के पट खोल प्रिये

घूघट के पट खोल प्रिये
मुखचन्द्र दिखा दे मतवाली,
हृदय व्योम मे चटक चादनी,
छिटका दे घूघटवाली ।

मूर्तिमान लज्जा क्या सचमुच
अपनी कला दिखाती है,
जिसे देखकर वीर बहूटी भी
सविनय सकुचाती है ।

नीलाम्बर के सूक्ष्म झरोखो से
प्रस्फुटित मधुर यौवन,
कहीं निरख आकुल अभिलाषा
कर न जाय सीमोल्लघन ।

तनिक हटा दे नीलाचल को
ऐ चचल चितवन वाली,
घूघट के पट खोल प्रिये,
मुखचन्द्र हटा दे मतवाली ।

मृगछौना सी मदमाती
इठलाती बडी-बडी आंखें,
विनय लाज से सकुचाई
नीचे की ओर गडी आंखें।

यदि उठ जाए ईश्वर जाने
दिल मे कैसी क्रान्ति मचे,
इन सुषुप्त अरमानों मे
क्या जाने कौन अशांति मचे।

सुमुखि पिला दे तृषित हृदय को
रूप सुधा की मधु प्याली,
घूंघट के पट खोल प्रिये
मुखचन्द्र दिखा दे मतवाली।

कितने ग्रन्थ उलट देखे,
कोई सुन्दर उपमान मिले,
अभिलाषा थी कोई तो
तेरे मुखचन्द्र समान मिले।

किन्तु कोई उपमा न मिली
इन गोल गुलाबी गालो की,
पूर्ण चन्द्र मे जडे हुए
इन दोनो अनुपम लालो की।

जिन्हें देख लज्जित होती है
रत्नमयी केशर थाली,
घूंघट के पट खोल प्रिये
मुखचन्द्र दिखा दे मतवाली।

यह ललाट पर वेणी है
अथवा है तेज प्रभाकर का,
अथवा मणि है मणिधर का,
अथवा प्रतिबिम्ब सुधाकर का ।

जिसे देखकर हृदय सिंधु की
भाव तरंगो पर अरमान
उछल रहे है मधुर मिलन
चिर अभिलाषा लिए महान ।

नीरस से जीवन मे ला दे
सरस सुयौवन की लाली,
घूंघट के पट खोल प्रिये
मुखचन्द्र दिखा दे मतवाली ।

यह चूड़ियां है

कलाकार ने कौशल के करो मे,
भर प्रेम सप्रेम बनाया इन्हे ।
किसी प्रेम-परीक्षा-प्रथा के निमित्त,
था अग्नि मे खूब तपाया इन्हें ।
गल के सुख से ढलने के लिए,
उसने जब प्रस्तुत पाया इन्हें ।
तो रचा के सुकोमल तूलिका ले,
बड चाव से खूब सजाया इन्हें ।
कुछ ऐसी भी थीं जो भयकरता
लख के दुख की कुछ डोल उठीं ।
जो तपी नहीं आच मे ठीक से थीं
वो जरा से दबाव में बोल उठीं ।

जो गला के स्वदेह सदेह बनी,
अपने तप तेज को तोल उठीं ।
परिपक्वता पूरी हुई जिनकी,
वह जीवन की जय बोल उठीं ।

जिन्होने इन्हे हाट मे देखा वही,
इन्हें लेने को हाथ बढाने लगे ।
लख सुन्दर रग-विरगा स्वरूप,
तुरन्त ही भाव चुकाने लगे ।

इन्हें पाकर प्राण प्रफुल्लित हो
उठे, मोद असीम बढाने लगे ।
घर मे इन्हे देखने पास-पडोस के
लोग भी चाव से आने लगे ।

किसी भी सुकुमार कलाइयो की
यह शोभा असीम बढाने लगीं ।
कभी घूघट मे सकुचाने लगीं,
अवगुठन मे इतराने लगीं ।

अनुराग पियूष लुटाती हुई,
यह प्रीति की रीति सिखाने लगीं ।
नवनेह सुधा मे पगी उमगी,
यह मजु मजीरे बजाने लगीं ।

यह लाजवती है छुई-मुई सी,
पर वीर कभी मरदानी बनीं ।
यह आग से खेलना जानती हैं,
इनसे सतियो की कहानी बनीं ।

दुरगा बनीं ये, कभी चडी बनी,
तो कभी यह झासी की रानी बनीं।
कभी राम की सीता पुनीता बनीं,
कभी श्याम की राधिकारानी बनी।

जब रूप का मान हुआ इनकी,
तो कुरूपता ने फिर फेरा किया।
सुख के इनके दिन बीत गये,
दुख के दिनो ने यहा डेरा किया।

इनसे मन फेर लिया उन्होंने,
जिन्होंने कभी प्यार घनेरा किया।
जब गेह मे नेह नही मिला तो,
किसी ढेर पे जाके बसेरा किया।

शतखड भी हो चुके देह के है,
पर ये कभी दीन नहीं हुई है।
गरिमामय बीते हुए दिनो की,
स्मृतिया छविहीन नहीं हुई है।

यह धूल मे धूनी रमाकर भी
धरा मे अभी लीन नहीं हुई हैं।
तन से कुछ मैली हुईं पर ये
मन से तो मलीन नहीं हुई है।

वारांगना

नारी का वह रूप इन्द्र भी जिसकी ओर निहार न पाया,
नारी का वह तेज तपस्वी का भी जिसने मान घटाया,
नारी का वह तेज विश्व ने जिसके आगे शीश झुकाया,
पतित हुआ जब, तब फिर उससे जो भी चाहा इठलाया,
एक पददलित भी अब उसका
करने को अपमान उठा है,
देख आज दयनीय दशा यह
फिर दिल मे तूफान उठा है।

चार पैर चलने पर ही वह क्षीणकाय जो हाफ रहा है,
लकडी के आसरे खडा है फिर भी थर-थर काप रहा है,
हड्डी-हड्डी चमक रही है जिसके सिर पर खाल नहीं है,
जिसे देख कर कह सकता कोई नहीं कि नर ककाल नहीं है,
प्रणय प्राप्त करने को वह भी
बन कर आज जवान उठा है,
देख-देख दयनीय दशा यह
फिर दिल मे तूफान उठा है।

इनमें कितनी ही समाज-शोणित की तृषित बलाए होंगी,
बाल्य काल मे हरी गयीं जो वे कोमल कलिकाए होंगी,
इनमे आला खानदान की कितनी ही महिलाए होंगी,
इनमे कितनी ही समाज की ठुकराई अबलाए होंगी;
अपना ही विनाश करने को
अपना आज विधान उठा है,
देख-देख दयनीय दशा यह
फिर दिल मे तूफान उठा है।
वह यौवन जो रण चडी बन रण मे प्रलय मचा देता था,
वह यौवन जो भृकुटि-भग से सारा विश्व हिला देता था,
वह यौवन जिसके इगित पर अगणित राज्य पलट जाते थे,
वह यौवन जिसकी रक्षा मे वीर अनेको कट जाते थे;
चादी के कुछ टुकडो पर अब
होने को बलिदान उठा है,
देख-देख दयनीय दशा यह
फिर दिल मे तूफान उठा है।
शक्ति, शाति, सद्ज्ञान सुधा से जो समाज को भर देती है,
उजडे हुए घरो को भी जो श्रेष्ठ स्वर्ग सा कर देती है,
उन महिलाओ का समाज मे यदि समुचित सत्कार न होगा,
तो समाज की दीन दशा का युग-युग तक उद्धार न होगा,
यही निवेदन करने को
कवियो का कम्पित गान उठा है,
देख-देख दयनीय दशा यह
फिर दिल मे तूफान उठा है।

जीवन का अधिकार जवानी

मुड़ जाए जिस ओर उधर ही
विप्लव की ज्वाला सुलगा दे,
उड़ जाए जिस ओर उधर ही
तूफानो के होश उड़ा दे,
दुष्ट दानवो की दुनिया का
करती है संहार जवानी ।

उसे देख पथ की बाधाए
दूर रसातल मे सो जातीं,
जिससे टकरा कर चट्टाने
क्षण मे चूर-चूर हो जाती,
भाग्य भरोसे कभी न रहकर
सहती अत्याचार जवानी।

उसका सिंहनाद सुनकर
दुश्मन दब जाते दाए बाए,
उसके प्रखर तेज से तप कर
गल जाती है लौह शिलाए,

क्रूर काल से भी करती है
जीवन का व्यापार जवानी।
वह गरजे तो दहल उठे जग,
वह भड़के तो प्रलय मचा दे,
उसके इंगित में इतना बल है
कि सफलता शीश झुका दे,
जीवन ज्वालामुखी और
उसकी ज्वाला साकार जवानी।
जीवन का अधिकार जवानी।

यह भगवान हमारे हैं

ओ अछूत तुम इधर न आना
ये भगवान हमारे है।

ओ अछूत तुम इधर न आना
तुम यह बोझा सह न सकोगे,
और यहा आकर ओ हरिजन
तुम मनुष्य भी रह न सकोगे।

मेरे देव और देवालय
मेरे पाप छिपा लेते है,
और यहा आकर हम अपना
पापी मन बहला लेते है।

अपनी स्वार्थ सिद्धि का साधन
हमने इन्हें बना रक्खा है
अपने पापो को हमने
प्रभु का जामा पहना रक्खा है।

समझ रहे हो इन पाषाणो मे
तुमको देवत्व मिलेगा ?
इनके पद प्रक्षालन करके
हरिजन ! तुम्हें महत्व मिलेगा ?

नहीं नहीं तुम भूल रहे हो,
अब इनमे देवत्व नहीं है,
ऊंचा तुम्हें उठा पाये कुछ
अब इनमे वह तत्व नहीं है ।

नयनो का यह नीर खारा न होता

तुम्हे पीडितो ने पुकारा न होता,
तो अवतार धरती पे धारा न होता ।
न जीवन मे होतीं अगर वेदनाए,
तो नयनो का यह नीर खारा न होता ।
न टिकते कभी ये भवन भावना के
जो अनुराग का ईंट-गारा न होता ।
नहीं भूलकर भी कोई नाम लेता,
अगर जग मुसीबत का मारा न होता ।
तरगो को कैसे प्रगति पथ मिलता,
सहारा दिये जो किनारा न होता।

मधुकर गुंजार नहीं करते

जो फूल सुरभि का उपवन मे सचार नहीं करते,
उन फूलो पर आकर मधुकर गुजार नहीं करते।
कैसे गुलाब जैसा उनको जग मे सम्मान मिले,
जो काटो मे पल कर अपना सिगार नहीं करते।
यदि हृदय जीतना चाहो तो दुनिया को अपनाओ,
असि के आतक कभी दिल पर अधिकार नहीं करते।
उपदेश और शिक्षाए उनकी व्यर्थ यहा होतीं,
जो आदर्शों को जीवन मे साकार नहीं करते
कम देकर ज्यादा पाने की क्यो इच्छा करते हो
भगवान कभी भी घाटे का व्यापार नहीं करते।

मां तेरा मै दीन पुजारी

मा तेरा मे दीन पुजारी ।

एक हाथ में सूनी झोली
एक हाथ मे तेरी माला,
दर्शन की प्यासी आखे ले
और हृदय का खाली प्याला ।
कुछ पाने की अभिलाषा से
तेरे पास चला आया हू ,
तेरे अर्चन को मं कुछ भी
अक्षत पुष्प नहीं लाया हू ।
मै क्या भेंट करू बतलाओ
बन कर आया स्वय भिखारी ।

मा तेरा मै दीन पुजारी ।

मेरे उर के उपवन मे तुम
भाव सुधा सरसाती आओ,
वीणापाणिनि वीणा की
मधुमय झकार सुनाती आओ।
शब्द सुमन के चारु चयन से
प्रति क्षण छन्द रचाती आओ,
मै मतवाला मधुकर बनकर
गाता जाऊ बारी-बारी।
मा तेरा मै दीन पुजारी।

दिव्य अलकारो से मै
कविता के नूतन साज सजाता,
हृद्तत्री की झकारो से
विश्व-प्रेम का स्रोत बहा दू,
रुचिर ज्ञानमय काव्य कलाधर
की शीतल किरणावलियो से
मै सतप्त विश्व के सारे
क्षण भर मे सताप मिटा दू,
यदि बन पाऊ मात शारदे
तेरे पूजन का अधिकारी।
मा तेरा मै दीन पुजारी।

तव पद रेणु प्राप्त करने को
तुलसी, सूर, द्विवेदी आये,
भूधर, दौलत, द्यानत, मनरग,
कवि बनारसीदास सुहाए।

तूने भूषण, देव, बिहारी,
गुप्त, कवीन्द्र रवीन्द्र बनाए ।
मैं भी मग मे आख बिछाए,
बैठा हू कुछ आश लगाए ।
मेरे मन मन्दिर मे आओ,
पा जाऊ पव धूल तुम्हारी।
मा तेरा मै दीन पुजारी ।

राम नाम को किया प्रतिष्ठित
स्वय राम के ऊपर

मातु शारदा के सपूत,
जन नायक हे युग त्राता,
हे कवीन्द्र, कवि-कुल-किरीट-मणि
मानस के निर्माता ।
नभ मे रवि शशि भू पर जब तक
पावन गगा धारा,
अमर रहेगा नाम विश्व मे
तुलसीदास तुम्हारा ।
शुष्कप्राय साहित्य-सृष्टि पर
सावन घन बन छाये,
वसुधा पर साहित्य सुधा के
सुखद मेघ बरसाये ।

काव्य कला की कलित कीर्ति सी
जन जीवन कल्याणी,
कोटि कोटि कठो मे भकृत
सुकवि तुम्हारी वाणी ।
मातु भारती ने समोद,
साहित्य मुकुट जब धारा,
चमक उठा तब उस किरीट मे
कोहेनूर तुम्हारा ।
मोह महातम भेद विश्व मे
आत्म प्रभा प्रकटा दी,
मत मतान्तरो के मन्दिर मे
मानस ज्योति जगा दी ।
विविध वाद–कर्दम के ऊपर
मानस कज खिलाया,
सरल समन्वय सिहासन पर
सबको ला बैठाया ।
भक्ति - रसामृत का सुख सिरजा
मुक्तिधाम के ऊपर,
राम नाम को किया प्रतिष्ठित
स्वय राम के ऊपर ।

सुकवि महान निराला

हिमगिरि से भी ऊंची थी
उसकी उदार ऊंचाई,
थी प्रशान्त सागर से गहरी
अन्तर की गहराई।
वसुधा पर दैवी विभूति बन
जो अवतीर्ण हुआ था,
जिसे स्पर्श कर काव्य कला का
पथ विस्तीर्ण हुआ था।
धन के आकर्षण की जिसको
छू न सकी थी छाया,
दीनो के हित सत्वर ही
जिसने सर्वस्व लुटाया।
दुखिया मानवता के आंसू
सदा पोंछता रहता,

औरों के ही दुख से जिसका
जीवन क्षण क्षण बहता ।
झुके विरोधी के मस्तक
जिस अगद के चरणो पर,
विजय केतु फहराया जिसने
तम के आवरणो पर ।
दृष्टिकोण जिसका असीम
व्यापक था अम्बर जैसा,
वह वाणी का धनी सतत ही
रहा दिगम्बर जैसा ।
कवि कुल का गौरव जिससे
जग मे साकार हुआ था,
सूर्यकान्त बन भारतेन्दु का
जो अवतार हुआ था ।
प्रतिभा के प्रसून से
मधु मकरन्द लुटाने वाला,
नहीं हमारे बीच रहा वह
सुकवि महान निराला ।

स्वतंत्रते प्रणाम लो

तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

असख्य जन समूह-मुक्ति के महा महेश हे,
असख्य जन-समूह के स्वतन्त्रता दिनेश हे,
अजस्र विश्व शान्ति के महान सन्निवेश हे,
स्वतन्त्र देश मे स्वतन्त्र रश्मि के प्रवेश हे,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

प्रफुल्ल पुष्प के पराग मुक्ति राग गा रहे,
विकीर्ण रश्मिया हुई सरोज मुस्करा रहे,
मुदित मधुप समूह कह रहा कि जय स्वतन्त्रते,
करो विजय स्वतन्त्रते, वरो विजय स्वतन्त्रते,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

उदधि उमड उठा स्वतन्त्रते कि पग पखार लें,
असख्य दीप जल उठे कि आरती उतार लें,
प्रभात सूर्य का किरीट धार लो स्वतन्त्रते,
पवित्र आर्य भूमि को निहार लो स्वतन्त्रते,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

हिमाद्रि शीर्ष धारिणी त्रिकाल सिन्धु सेविता,
सुरम्य शस्य श्यामला विशाल विश्व वन्दिता,
ललाट बिन्दु सा जहा सुरम्य काश्मीर है,
महान देश दक्षिणी विशाल सिन्धु तीर है,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

समीप मध्य देश रम्य उत्तरीय धारिणी,
विशाल बग वासिनी समुत्कला विहारिणी,
महान राजस्थान आज शौर्य गीत गा रहा,
जहा कि आज भी प्रताप का प्रताप छा रहा,
तुम्हे प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

महान राष्ट्र प्रेम का ज्वलन्त जय निनाद सा,
जहा कि क्षत्रपति हुआ स्वतत्र सिहनाद सा,
जहा कि पचनद रहा हरा भरा बहार सा,
जहा कि गुर्जरीय देश सिंधु सिहद्वार सा,
तुम्हे प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

यही है जन्मभूमि विश्ववद्य कृष्ण राम को,
यही है मातृभूमि बुद्ध, वीर, पुण्यधाम को,
इसी के भव्य भाल पर तिलक तिलक लगा गये,
महान राष्ट्र के पिता सहर्ष बलि चढ़ा गये,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

स्वदेश के सपूत देश-प्रेम मे निरत रहें,
स्वदेश के पदारविन्द मे सदैव नत रहें,
स्वदेश के सपूत दृढ़ प्रतिज्ञ वीर प्रण करें,
स्वदेश के लिए जियें स्वदेश के लिए मरें,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

अशेष बन्धुभाव से स्वदेश का सुधार हो,
पुनीत पचशील का दिगत में प्रसार हो,
पवित्र आत्मभाव की ज्वलन्त ज्योति सी जगे,
समस्त विश्व विश्व के पुनीत प्रेम मे पगे,
तुम्हें प्रणाम कर रही वसुन्धरा प्रणाम लो ।

विनत भाल युत शत प्रणाम
हे देश महान तुम्हें

हे भारत हे वसुन्धरा के
पावन प्राण तुम्हें
विनत भाल युत शत प्रणाम
हे देश महान तुम्हें ।

हिम गिरि का मणिमय किरीट
तव मस्तक पर सोहे
गगा यमुना सिधु सरित-
मणि माला मन मोहे ।

धन धान्यादि प्रपूरित वसुधा
ऐसी और कहा ?
शिशिर हिमत बसत ग्रीष्म
वर्षा ऋतु शरद यहा ।

प्रभु की कृपा समूर्त, प्रकृति के
प्रिय वरदान तुम्हें
विनत भाल युत शत प्रणाम
हे देश महान तुम्हें ।

वन उपवन तरु पत्र-पुष्प
समलकृत सुन्दरता
सतत मुदित शुचि सिंधुराज
पद-प्रक्षालन करता ।

तव पौरुष के कीर्ति केतु
युग नभ मे फहराये
जय हे भारत तुमने,
नर मे नारायण पाये ।

हे आगत-उत्थान, विगत के
गौरव गान तुम्हें
विनत भाल युत शत प्रणाम
हे देश महान तुम्हें ।

शत-शत श्रद्धांजलि अर्पित है
देश-प्रेम के दीवानो को

शत-शत श्रद्धांजलि अर्पित है
देश-प्रेम के दीवानो को,
स्वतन्त्रता के पावन पथ पर
मिटने वाले मस्तानो को।

मलय समीरण जिनके ऊपर
प्रति दिन चवर डुला जाता है,
नील गगन तारक मणियो के,
जिन पर हार चढ़ा जाता है।

नित्य सबेरे अरुणिम ऊषा
जिन पर अर्घ चढ़ाने आती,
गिरि श्रृगो पर सध्या जिनकी
गौरव गाथाए लिख जाती।

युग-युग तक इतिहास कहेगा
जिनके पावन बलिदानो को,
शत-शत श्रद्धांजलि अर्पित
उन देश-प्रेम के दीवानों को।

मेघो मे प्रतिध्वनित हो रही
जिन रण वीरो की रणभेरी
निशि वासर जिनकी समाधि की,
सूरज चाद लगाते फेरी।

सीमा की रक्षा के पथ पर
जीवन जिन्हें नगण्य हो गया,
विजय तिलक उनके ललाट पर
अकित होकर धन्य हो गया।

हिम गिरि का मस्तक ऊचा है
लख कर जिनके अभियानो को,
शत-शत श्रद्धाजलि अर्पित
उन देश-प्रेम के दीवानो को।

लिया अवतार बापू ने

जगत का कष्ट हरने को
लिया अवतार बापू ने,
दुखी ससार का कितना
किया उपकार बापू ने ।

पडोसी को सदा हम लोग
दुश्मन मान लेते थे,
जरा सी बात पर आपस मे
झगडे ठान लेते थे ।

हमे अपने बडप्पन का
बडा अभिमान रहता था
कि हम है ऊच, तुम हो नीच
यह अरमान रहता था ।

कि हर इंसान को करना
सिखाया प्यार बापू ने,
दुखी संसार पर कितना
किया उपकार बापू ने।
त्याग से और सेवा से
भरी उनकी कहानी है।
यही इतिहास है उनका
यही उनकी कहानी है।
गुलामी और मुहताजी,
हमारे बीच छायी थी,
तबीयत मे हमारे किस कदर
नफरत समाई थी।
गुलामी और नफरत से
किया उद्धार बापू ने,
जगत का कष्ट हरने को
लिया अवतार बापू ने।
जिसे इन्सान से नफरत हो
वह इन्सान कैसा है,
सिखाये हमको नफरत जो
कि वह ईमान कैसा है।
देश पर, कौम पर उसने
निछावर जान कर डाली,
जरूरत जब पड़ी तो
जान तक कुरबान कर डाली।

बसाया प्रेम का सचमुच
नया ससार बापू ने,
जगत का कष्ट हरने को
लिया अवतार बापू ने।
कि हर हिन्दू मुसलमा
आज उनके गीत गाता है,
न केवल हिन्द ही
ससार उनको सिर झुकाता है।
जियो ससार के खातिर,
मरो ससार के खातिर
कि जो कुछ हो सके तुमसे
करो ससार की खातिर।
इसी का अपने जीवन से
किया इजहार बापू ने।
जगत का कष्ट हरने को
लिया अवतार बापू ने।

चाऊ तुमको लाज न आयी

जो सीमा युग-युग से अब तक
स्नेह शान्ति की परिभाषा थी,
जो सीमा नूतन प्रकाश
फैलाने की उज्जवल आशा थी।

गौतम का सन्देश जहां पर
अमृत की वर्षा करता था,
जिस सीमा पर विश्व बधुता का
पावन निर्झर झरता था।

जिस सीमा का जग ने माना
था भाई-भाई का नाता,
जिस सीमा के आर पार था
पचशील का ध्वज लहराता।

उस सीमा पर आज अचानक
चमक उठीं चीनी तलवारें,
तोपो का गर्जन क्षण प्रति क्षण
और गोलियो की बौछारें।

सारी दुनिया जान चुकी है
ओ कृतघ्न तेरी मक्कारी,
लग कर गले आज तूने की
विश्वासों के सग गद्दारी ।

यह प्रसारवादी तृष्णा का
कितना घृणित प्रयास हुआ है,
आज कलंकित भ्रातृभाव का
चिर परिचित इतिहास हुआ है।

जब-जब उगे उगलियो मे है
ओ चीनी नाखून तुम्हारे,
तब तब तुमने मृग तृष्णा मे
मानवता के हृदय बिदारे ।

दुनिया ने था सुना एक दिन
हिन्दी–चीनी भाई–भाई,
आज वही नाते ठुकराते
चाऊ तुमको लाज न आयी।

उफ ! कितनी मीठी-मीठी थी
चीनी जैसी बात तुम्हारी,
किन्तु छिपी थी उसके पीछे
यह जहरीली घात तुम्हारी ।

दाख समझ कर जो तुमने
लद्दाख हमारा लेना चाहा,
दोस्ती का हक पचशील का
नाता तुमने खूब निबाहा।

अरे मनुजता के हत्यारों !
और सभ्यता के ओ डाकू !
तुमने साजिश कर अयूब से
चला दिया सीमा पर चाकू ।

निपट शांतिप्रिय समझें हमें
जो फैलाते हैं अपनी टांगें,
उन पड़ोसियो को लाजिम है
बिना बुलाये मौत न मांगें ।

अगर क्रुद्ध चेतक की उन पर
एक टाप भी पड़ जायेगी,
तो सच समझो बिना कफन ही
लाश भूमि पर गड़ जायेगी ।

तुमने तिब्बत पर जब अपना
घातक पंजा फैलाया था,
तब क्या यह संसार तुम्हारी
नीयत समझ नहीं पाया था ।

भारत पर हमला करने की
वह थी केवल चाल तुम्हारी,
किन्तु समझ लो इस धरती पर
नहीं गलेगी दाल तुम्हारी ।

एक सूत्र मे बद्ध आज है
सारा राष्ट्र महान हमारा,
कोटि-कोटि जन बल से पूरित
आज विजय अभियान हमारा ।

पराक्मी पंजाब सिंह सा
होकर क्रुद्ध दहाड रहा है,
रण बांकुरा बिहार लिए तलवार
तुम्हें ललकार रहा है।

समरागण से जीवित तुमको
राजस्थान न जाने देगा,
एक इच भी भूमि देश की
तुम्हें नही अपनाने देगा।

उत्कल, केरल, गुर्जर रण के लिए
कर रहे है तैयारी,
मध्य प्रदेश सरोष देखता
समरागण मे बाट तुम्हारी।

शपथ वीर कश्मीर शीश पर
रण चडी बन कर खेलेगा,
महीशूर मैसूर धृष्टता का
सारा बदला ले लेगा।

आतुर है मद्रास आज
शोणित से तुमको नहलाने को,
और हिमाचल हुमक रहा है
चीनी तुम्हें चबा जाने को।

तुमने अभी नहीं देखा है
शायद आसामी असिधारा,
काल तुल्य बगाल खड़ा है
लेने को बलिदान तुम्हारा।

उधर आंध्र के आंगन में भी
गूंज उठे रणभेरी के स्वर,
घर-घर अलख जगाते फिरते,
महा रुद्र प्रलयंकर शंकर ।

यह उत्तर प्रदेश भी तुमको
ऐसा तीखा उत्तर देगा,
सारे नकली दांत तुम्हारे
तोड़ हथेली पर धर देगा ।

कपटी मेहमान

भोले भारत देख विश्व की
जहर भरी मुस्कानो को,
जो भाई बन कर आये थे
उन कपटी मेहमानो को।
जिसने भारत की सीमा पर
अपनी आख उठायी है,
वही चीन, हा, वही चीन
जिसको समझा था भाई है।
हमे चुनौती आज दे रहा है
वह नगी तलवार लिये,
बातो मे मधु की मिठास
पर घातो मे अगार लिये।

क्यो सनयात सेन की शिक्षा
बार-बार यों घुल जाती है,
पैकिंग की कैसी पैकिंग है
जो बार-बार खुल जाती है ।

चिन्ता नहीं पड़ोसी बन कर,
चला नाग मतवाला है,
भारत का हर कुवर कन्हैया,
नाग नाथने वाला है ।

कोटि-कोटि तन मे लेकर हम
आज एक मन प्रान चले,
बरसो के प्यासे खाडे फिर
करने रक्त स्नान चले ।

कविता-क्रम

मेरे जीवन का पतझड भी आज बसंत बहार बन गया	१७
मधु-ऋतु मुसकाना क्यों छोड़े	२०
फूल से हम मुस्कराना सीख लें	२२
एक साथी चाहिए	२४
आज मेरा प्यार मुझसे दूर है	२६
पलक पांवड़े मैं बिछाता रहूंगा	२८
तुम क्या समझो कैसे मन को बहलाना पड़ता है	३०
ये मध्यवर्ग के मानव है	३२
दुख भी मानव की सम्पति है	३४
पुण्य कार्य मत करो भले ही	३६
मानवता का मान चाहिए	३९
आखिर इसका कारण क्या है	४१
मै भी वही धूल हूं	४३
घास	४५
चट्टानें और लहरें	४९
अभी न नयनों से ओट होना	५२
क्षितिज का छोर	५५
महान मानव	५७
वह पत्थर को भगवान बना सकता है	६०
जीवन मरण की नदी एक ही है	६२
मैं बना रहूं जग बना रहे	६४
जलते रहना ही जीवन है	६६
सुख भी देखा दुख भी देखा	६८
दुख डराना चाहता है	७२
मानव मुस्काना ठीक नहीं	७४
गूंजते है गान मेरे	७७

आज न जाने क्यों रूठे हैं मेरे मन के मीत रे ७६
नैनों से बहार मत निकलो ८१
मुझे बहारो से क्या प्रयोजन ८३
न अब मुस्काने को जी चाहता है ८५
आंसू ८७
अब कभी बसत न आये ९०
मधुमास मुबारक हो तुमको ९३
पतझर ९५
कभी भी प्यार का नाता किसी से हम न जोड़ेंगे ९८
टूटे हृदय की पीर १००
मुझसे शूल कहा करते हैं १०२
कह रहे हैं शूल भी मुझसे कि मेरा प्यार ले लो १०४
बोलो ओ सुकुमार कली १०६
जल बिन्दु क्यो इठला रहे हो १०७
अपना ससार बसा न सका १०९
जीवन पर कितना भार लिए जीता हू १११
जागे आज व्यथा के भाग ११३
बादल बात किया करते हैं ११४
सुखमय कब है ससार ११६
तुम मुझको अपना न सकोगे ११८
मैं तुम्हारे पास ही तो हू १२०
मैं चेतन हू १२२
बताओ तुम कौन हो १२४
गुनगुनाता जा रहा हू १२६
मैं अनादि अनत का गूढ रहस्य १२८
मुक्ति पथ का पथिक १३१
जग मे वही महान है १३४

तब शूल फूल बन जाते हैं १३६
अपने ही बाधे बधन क्यों आज मुझे स्वीकार नहीं १३८
प्रत्येक समय ससार नया १४१
यह सारा जग तिनका है १४३
मैं सोच-सोच रह जाता हू १४५
सोचता हू आज यह ससार क्या है, सार क्या है १४७
जिन्दगी सघर्ष ही का नाम है १४९
मैं धरती की धूल हू १५१
बदी पक्षी १५४
स्मृति १५६
यह गीत पुराने लगते हैं १५८
अब समाज मे आना होगा १६०
कवि अपनी उलझन लिखता है १६२
गा कवि मगल का उपचार १६४
विश्व मे नव जागरण हो १६७
क्या सचमुच इन्सान यही है १६८
लिखने का पेशा करता हू १७०
उस कला का क्या करू मै १७२
आज प्रलय के गान लिखो १७४
कवि अपने गीत सुनाता चल १७६
मै दिन भर गाता रहता हू १७९
पहले हम इसान बनें १८१
बस अपना कार्य किये जाओ १८४
उपकार करके भूल जाओ १८६
दक्ष रहो १८८
निर्बलते तू है पाप रूप १९०
मत दीन बनो १९२
मतवाले न बनो १९५

भयभीत न बन	१९७
मै पतित नहीं हू	१९९
दो दिन का मेहमान हू	२०१
जन्मांध	२०३
दोनों मनुष्य हैं—दोनो रहस्य है	२०५
भावना पत्थर नहीं है	२०६
धोखा दिया है	२०८
रो रो कर भी गाओगे तुम	२१०
प्रकृति में बसती छटा छा रही है	२१२
चद्रलोक मे	२१४
कुटीर कल्पना	२२०
घूघट के पट खोल प्रिये	२२२
यह चूडिया हैं	२२५
वारांगना	२२८
जीवन का अधिकार जवानी	२३०
यह भगवान हमारे हैं	२३२
नयनो का यह नीर खारा न होता	२३४
मधुकर गुजार नहीं करते	२३५
मां तेरा मै दीन पुजारी	२३६
राम नाम को किया प्रतिष्ठित स्वय राम के ऊपर	२३९
सुकवि महान निराला	२४१
स्वतत्रते प्रणाम लो	२४३
विनत भाल युत शत प्रणाम हे देश महान तुम्हें	२४६
शत-शत श्रद्धांजलि अर्पित है देश-प्रेम के दीवानो को	२४८
लिया अवतार बापू ने	२५०
चाऊ तुमको लाज न आयी	२५३
कपटी मेहमान	२५८